सुभाष

सम्पादक: डा. गिरिराज शरण

प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली

हम अपने खून से अपनी स्वतंत्रता का मूल्य चुकाएंगे और ऐसा करके हम राष्ट्रीय एकता की नींव रखेंगे। अपनी आजादी को बनाए रखने में हम तभी समर्थ होंगे जबकि इसे अपने बलिदान और खून से प्राप्त करें।

—सुभाषचंद्र बोस

क्रांति का देवता

"भले ही कोई तात्कालिक और मूर्त लाभ न हो, तथापि कोई भी वेदना और बलिदान कभी निस्सार नही जाता। बलिदान और कष्टों के द्वारा ही कोई उद्देश्य सफल और प्रतिफलित हो सकता है, हर युग मे, हर स्थान मे यह शाश्वत नियम लागू होता है कि शहीद के खून से ही धर्म अंकुरित होता है।" ये शब्द है क्रांति के अमर देवता सुभाषचन्द्र बोस के, जिनका जीवन साम्राज्यवाद के विरुद्ध सघर्ष का प्रतीक बन गया है।

बारह वर्ष की अवस्था मे, हैजे-महामारी से पीड़ित ग्राम जाजपुर मे उन्होंने ब्रिटिश शासन की निष्क्रियता और उपेक्षा को खुली आख देखा। गाव का गाव मृत्यु का ग्रास बनता जा रहा था किन्तु सरकार के कान पर जूं तक न रेंगी। छात्र-जीवन में एक अंग्रेज अध्यापक ने भारतीयों के लिए 'ब्लैक मंकी' शब्द सुनकर उनका खून खौल गया और उनका हाथ अंग्रेज अध्यापक के गाल पर छप गया था। पिता के अत्यधिक आग्रह पर उन्होंने इगलैंड जाकर आई० सी० एस० की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण

की, किन्तु स्वदेश लौटकर सुख-सम्मान की उस बड़ी नौकरी को ठोकर मारकर स्वयं को आजादी की लड़ाई में झोंक दिया।

उन्होंने अपने भाई शरत्चन्द्र को लिखा था—"हम जिस राष्ट्रीय मुक्ति की कामना करते हैं, वह त्याग और कष्ट सहन के रूप में अपनी कीमत लिए बिना नहीं मिल सकती। यह अनुभव करने के लिए जिनके पास हृदय है और कष्ट सहने के अवसर हैं, उन्हें पूजा के पुष्प लेकर आगे आना चाहिए।" उनका मत था कि केवल त्याग और कष्ट-सहन की धरती पर ही राष्ट्र के उत्थान की नींव डाली जा सकती है।

सुभाष महान् देशभक्त थे। ब्रिटिश दासता से मुक्त और पूर्ण स्वातन्त्र्य उनका लक्ष्य था। बर्लिन रेडियो से एक प्रसारण में उन्होंने कहा था—"अपने जीवन की अन्तिम सांस तक मैं मातृ-भूमि की सेवा करता रहूंगा और उसके लिए बड़े-से-बड़ा बलि-दान करने से न झिझकूंगा। मेरे लिए भारत का हित सर्वप्रिय है, चाहे मैं संसार के किसी भी भाग में हूं।"

सुभाष को भारतीय संस्कृति में अटूट विश्वास था। वे कहते थे कि मैं उन लोगों में नहीं हूं जो आधुनिकता के जोश में अपने अतीत के गौरव को भूल जाते हैं। हमारे पास विश्व को देने के लिए दर्शन, साहित्य, कला और विज्ञान में बहुत कुछ है और सारा संसार हमारी ओर टकटकी लगाए देख रहा है।

ऐसे अमर बलिदानी, राष्ट्रभक्त और क्रांतिकारी विचारक नेताजी सुभाष की चिंतनधारा से अपने देश की होनहार छात्र-युवा पीढ़ी को परिचित-प्रेरित करने के शुभ संकल्प से यह संकलन प्रस्तुत है। विभिन्न प्रामाणिक स्रोतों से नेताजी के विचार-संग्रह, अनुवाद, वर्गीकरण और संपादन में प्रो० बलजीतसिंह, प्रो०

वी० पी० गुप्ता और डॉ० राजकुमार अग्रवाल से मुझे सर्वाधिक सहयोग मिला। इन सबका आभार व्यक्त करना मैं अपना कर्तव्य मानता हूं।

नेताजी का साहित्य अधिकतर अंग्रेजी और बांग्ला में ही उपलब्ध है। हिन्दी साहित्य की यह कमी पूरी करने के लिए इस रचना का स्वागत होगा, ऐसा विश्वास है।

—डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

अनुक्रम

सुभाष ने कहा था

अंग्रेज

आपकी यह घातक भूल होगी यदि आप अंग्रेजों की सरकार को अंग्रेजों से भिन्न मानें। निःसन्देह ब्रिटेन में आदर्शवादियों का एक छोटा-सा समूह है—जैसा कि अमरीका में भी है—जो चाहता है कि भारत आजाद हो जाए। इन आदर्शवादियों को वहां वाले सनकी समझते हैं। उनकी संख्या नहीं के बराबर है। जब भारत का प्रश्न उठता है तो यथार्थ में अंग्रेज सरकार और जनता में कोई अन्तर नहीं रहता।

—गांधीजी को सन्देश (६ जुलाई, १९४४)

मैं अपनी पूरी ताकत के साथ यह कहूंगा कि युद्ध यदि भारत तक आया तो उसकी पूरी जिम्मेदारी उन भारतीयों पर ही होगी जो ब्रिटेन के युद्ध में सम्मिलित हो रहे हैं। मैं अपने देशवासियों को पुनः यह चेतावनी देना चाहता हूं कि अब ब्रिटेन का एकमात्र उद्देश्य भारत को युद्ध में घसीटना है। युद्ध में दूसरे देशों को उलझा देने में अंग्रेज हमेशा सफल रहे हैं। युद्ध में अब तक वे स्थान खाली कर शानदार ढंग से पीछे हटते रहने में ही कामयाब रहे हैं।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१९४२)

अंग्रेजी दमन

अंग्रेजों ने पिछले महायुद्ध को भारत की सहायता से जीता था लेकिन उसका पुरस्कार उसे अधिक दमन और जन-संहार के रूप में मिला। भारत उन घटनाओं को भूला नही है और वह इस बात की कोशिश करेगा कि मौजूदा सुनहरा मौका हाथ से निकल न जाए।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१९४२)

अंग्रेजी भाषा का ज्ञान

मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूं कि मेरा अंग्रेजी भाषा का ज्ञान बिल्कुल गया-बीता नही है अन्यथा १९२० को आई० सी० एस० की खुली प्रतियोगिता में अंग्रेजी के निबन्ध में प्रथम स्थान न प्राप्त किया होता। मैं तो हिम्मत के साथ यह कह सकता हूं और दावा करता हूं, हालांकि श्री फ्लावरडूय एक ब्रिटिशर है—और मैं एक भारतीय हू—फिर भी अंग्रेजी भाषा और साहित्य का मेरा ज्ञान उनकी अपेक्षा कहीं अधिक गहन है।

— पत्रावली, पृष्ठ २१२

अंग्रेजी शासन

ज्यों-ज्यों हम स्वतंत्रता के उदय के निकट पहुचते जा रहे है, हमारे कष्टों और पीड़ाओं का प्याला भरता जा रहा है। यह स्वाभाविक ही है कि अपने हाथों से शक्ति को धीरे-धीरे खिसकता हुआ पाकर हमारे शासक भी अन्य निरंकुश शासकों की भांति अधिक से अधिक क्रूर होते जाएं और इसमें किसीको आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि वे सभ्यता के आवरण को उतार-कर फेंक दें और शालीनता के मुखौटे का त्याग कर दें, जिससे

कि प्रहारक घूंसे का प्रयोग स्वतंत्रतापूर्वक और विवेक किया जा सके।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस, लाहौर मे अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

अंग्रेजी सरकार

भारतीय जनता अपने कटु अनुभव से जानती है कि भारत में भ्रष्टाचार और घूसखोरी के लिए ब्रिटिश सरकार ही जिम्मेदार है।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१९४२)

अंग्रेजों की नीति

प्रत्येक भारतीय राजनीतिज्ञ जानता है कि भारत में अंग्रेजों का लक्ष्य सदैव 'लड़ाओ और राज्य करो' की नीति है। जब तक उनके पैर भारत की मिट्टी पर रहेंगे वे कभी अपनी दूषित नीतियों का परित्याग नहीं करेंगे।

—बर्लिन से प्रसारण (१३-३-१९४२)

भारत में अपने पूरे शासनकाल में, अंग्रेज भारतीयों में फूट डालने का प्रयत्न करते रहे हैं। इस उद्देश्य में वे कुछ सीमा तक सफल भी हुए हैं और विभिन्न वर्गों में फूट का तर्क देकर उन्होंने भारत को स्वराज्य देने के लिए सदैव इंकार किया है। अंग्रेजों के षड्यंत्र का कोई अंत नहीं है।

—बर्लिन से प्रसारण (१३-३-१९४२)

भारतीय जनता अंग्रेज राजनीतिज्ञों की दुर्नीति से अच्छी तरह परिचित है और मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे स्वतंत्रता-सेनानी भले ही जेलों में बंद हों पर उनकी भावना जेलों की दीवारों को चीरती हुई भारत की जनता को बता देगी कि यह भारत के आत्मसम्मान और गौरव का अपमान है।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१९४२)

यह बात याद रखने योग्य है कि यह ब्रिटिश विचार कि अंग्रेजों शासन के अधीन ही हम राजनीतिक रूप से संगठित हुए हैं, नितांत गलत है। अपने शासनकाल में अंग्रेजों ने भारत में जो कुछ भी प्रयत्न किया, वह केवल भारतवासियों को विभाजित करने, उनको कमजोर, निशस्त्र और पुंसत्वहीन करने का था।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सबोधन (नवम्बर, १६४४)

अन्तिम विजय

मुझे यह नही मालूम कि आजादी की इस लड़ाई में हम में से कितने बच रहेंगे। लेकिन मैं यह जानता हूं कि अंत में विजय हमारी ही होगी और हमारा प्रयत्न तब तक समाप्त नही होगा जब तक ब्रिटिश साम्राज्य के दूसरे कब्रिस्तान लाल किले पर हम में से जीवित रहने वाले वीर योद्धा विजय-परेड न करें।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१६४३)

अधिकारी

हमेशा याद रखें कि अधिकारी या तो सेना को बनाते हैं अथवा बिगाड़ देते हैं। यह भी याद रखिए कि निकम्मे अधिकारियों के कारण अंग्रेजों की इतनी अधिक मोर्चों पर हार हुई और यह भी याद रखिए कि भविष्य में आजाद हिन्द की फौज का उच्च सैन्य-मण्डल आप लोग ही बनाएंगे।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१६४३)

अध्ययन एवं मनन

किसी कार्य में सफलता अथवा असफलता से जो अहंकार एवं निराशा मिलती है, उनका उन्मूलन करके, मनुष्य को संयत

बनाने के लिए, अध्ययन एवं मनन ही एकमात्र उपाय है। मनुष्य में तभी आन्तरिक अनुशासन आ सकता है। आन्तरिक संयम न होने पर बाह्य संयम स्थायी नहीं हो सकता। नियमित व्यायाम से जिस प्रकार शरीर का विकास होता है ठीक उसी प्रकार नियमित साधना से सद्वृत्तियों का उद्भव और वासनाओं का नाश होता है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२६)

अपने उपवास के सम्बन्ध में

यदि मुझको बलपूर्वक कुछ भी खिलाने का प्रयत्न किया गया तो मेरे पास इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं रह जाएगा कि मैं इसके परिणामस्वरूप होने वाली असहनीय दीर्घकालिक वेदना से मुक्ति पाने के लिए कुछ कदम उठाऊं। यह केवल आत्महत्या के द्वारा ही किया जा सकेगा और इसका उत्तरदायित्व पूर्णरूपेण सरकार के ऊपर होगा।

उस आदमी के लिए, जिसने जीवन से कमर तोड़ ली हो, अपने इस उद्देश्य (मृत्यु) को पाने के सैकड़ों तरीके है और पृथ्वी पर कोई भी शक्ति उसकी मृत्यु को नहीं रोक सकती। मैंने अत्यधिक शांत तरीका चुना है और मुझको कम शांतिपूर्ण तरीका या कोई अधिक उग्र उपाय अपनाने के लिए विवश करना नितांत पाशविकता होगी। जो कदम मैंने उठाया है वह एक साधारण उपवास नहीं है। यह कई माह के परिपक्व मनन का परिणाम है।

—प्रेसीडेंसी जेल से बंगाल के चीफ मिनिस्टर को पत्र (२-५ दिसम्बर, १९४०) क्रास रोड्स, पृ० ३८२

कठपुतली अध्यक्ष रहने की मुझे कोई इच्छा नहीं है और न ही हर हालत में अपने पद से चिपके रहने की इच्छा है।

—हाजरा पार्क कलकत्ता में भाषण (१६-५-१९३९)

जब ब्रिटिश शासन ही मेरा आत्मबल नहीं तोड़ सका, ठग नहीं सका अथवा फुसला नहीं सका, तो विश्व की कोई भी शक्ति ऐसा नहीं कर सकती।

—सिंगापुर मे आम सभा (९-७-१९४३)

जिसने अंग्रेजी राजनीतिज्ञों के साथ और उनके विरुद्ध आजीवन काम किया है वह संसार के अन्य किसी राजनीतिज्ञ से धोखा नहीं खा सकता। अगर अंग्रेजी राजनीतिज्ञ मुझे फुसलाने अथवा मजबूर करने में असफल हुए हैं तो कोई भी अन्य राजनीतिज्ञ वैसा करने में सफल नहीं हो सकता। जिस अंग्रेज सरकार ने मुझे लम्बे अर्से तक जेल में रखा और तरह-तरह की शारीरिक तथा अन्य यातनाएं पहुंचाईं, वही जब मुझे पस्त नहीं कर सकी तो कोई अन्य सत्ता ऐसा करने की कैसे उम्मीद रख सकती है? मैंने कभी ऐसा कोई काम नहीं किया है, जिससे मेरे देश के गौरव, आत्मसम्मान अथवा देशहित को ठेस पहुंची हो।

—गांधीजी को सन्देश (६ जुलाई, १९४४)

मां, मैं आपकी नितान्त अयोग्य सन्तान हूं। तुम्हारी ममता मुझे मानवता की ओर खींच रही है। मां, आशीर्वाद दो कि जन्म-जन्मान्तर तक मैं तुम्हारी जैसी मां प्राप्त करके पुनः अपने जीवन को सार्थक बना सकूं।

—पत्रावली, पृ० २७२

मुझे अपने आप से शायद सबसे तीव्र संघर्ष काम-वासना के क्षेत्र में करना पड़ा और यह निर्णय करने के लिए मुझे प्रायः

कोई भी प्रयास नहीं करना पड़ा था कि मुझे अपनी निजी बेह-तरी का जीवन नहीं जीना है, बल्कि किसी महान् उद्देश्य के प्रति समर्पित होना है। मुझे सेवा और अनिवार्य कष्ट-सहन के जीवन के लिए अपने आपको शारीरिक एवं मानसिक रूप में तैयार करने के उद्देश्य से कुछ प्रयास करना पड़ा।

—आत्मकथा, अध्याय ६

मेरी मानसिक बनावट में किसी-न-किसी तरह की असा-मान्यता का स्पर्श था। मैं न केवल अत्यधिक अंतर्मुखी वृत्ति वाला था बल्कि कुछ मायनों में असमय परिपक्व भी था। परिणाम यह हुआ कि जिस अवस्था में मुझे फुटबॉल के मैदान में अपने आपको थकाते रहना होता, मुझे उन समस्याओं को लेकर चिन्ताग्रस्त होना पड़ा, जिन्हें अधिक पकी उम्र के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए था।

—आत्मकथा, अध्याय ५

मेरी यह धारण दृढ़ होती जा रही है कि जीवन की सच्चाई को कायम रखने के लिए यह आवश्यक है कि पूर्णाहुति के लिए निरन्तर तैयार रहा जाए। जीवन के प्रभात में हृदय में इस प्रार्थना को लेकर कर्मक्षेत्र में पदार्पण किया था—"हे प्रभो, जिसे जीवन में कोई उद्देश्य दो, उसे उसको पूरा करने की शक्ति भी दो।" भविष्य की बात मैं नहीं जानता। परन्तु अभी तक भगवान उस प्रार्थना को निभाते आ रहे हैं। इसी कारण मैं बहुत सुखी हूं। कभी-कभी तो सोचता हूं कि मेरे समान सुखी व्यक्ति इस जगत् में और कितने है?

—पत्रावली पृ० २३०

मैं आपसे कहता हूं कि मुझ पर विश्वास कीजिए। यहां तक कि मेरा कोई शत्रु भी यह कहने का साहस नहीं करेगा कि मैं

कोई ऐसा कार्य भी कर सकता हूं जो मेरे देश के हितों के विरुद्ध हो।

—सिंगापुर मे आम सभा (९-७-१९४३)

मैं इच्छा और अभिमान को पूर्णतः लांघना चाहता हूं।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

मैं उन तीन धुरी राष्ट्रों का पृष्ठपोषक नहीं हूं और जो कुछ उन्होंने किया है या जो वे भविष्य में करेंगे उसका समर्थन करना मेरा काम नहीं है। यह कार्य तो स्वयं इन राष्ट्रों के जिम्मे आता है। मेरी दिलचस्पी तो भारत में है और अगर अधिक कहूं तो सिर्फ भारत के साथ है।

—बर्लिन से प्रसारण (१-५-१९४२)

मैं किराये का सैनिक नहीं हूं। सहज में ही कहीं आत्म-समर्पण नहीं करता। परन्तु जहां करता हूं वहां से सरलता से लौटता भी नहीं। मेरे त्याग और मेरी उदारता पर आपका सदैव अधिकार रहेगा। आप उसका उपयोग करें या न करें यह आपकी इच्छा पर निर्भर है। इस समय मुझे अपना मार्ग स्वयं ही निश्चित करना पड़ेगा। वह मार्ग मुझे कहां ले जाएगा यह मैं अभी तक निश्चित नहीं कर पाया हूं।

—पत्रावली, पृ० २९९

मैंने आपको पहले ही आश्वासन दिया है कि विदेश में जो कुछ मैं कर रहा हूं वह अपने अधिकांश देशवासियों की इच्छानुसार ही कर रहा हूं। मैं कोई ऐसी बात नहीं करूंगा जिसका भारत तहेदिल से समर्थन न करता हो। जब से मैंने देश छोड़ा है, भारत सरकार के खुफिया विभाग और अंग्रेजी गुप्तचर सेवा के प्रयास के बावजूद अपने देशवासियों से मैं एक से अधिक माध्यमों द्वारा निकट सम्पर्क में हूं। पिछले कई महीनों में आप को ऐसे प्रमाण मिल गए होंगे कि मैं अपने देशवासियों के निकट

सम्पर्क में हूं और आपमें से बहुत से लोग यह भी जानते होंगे कि अगर आप चाहें तो मुझसे कैसे सम्पर्क कर सकते हैं। अब मैं आपको यह भी बतला दूं कि अंग्रेजों के लिए यह मुमकिन नहीं है कि वे मुझे अपनी इच्छा से देश में आने और वहां से बहार जाने पर रोक लगा सकें।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

मैंने जीवन का आरम्भ आत्मसंशय की भावना के साथ, इस अनुभूति के साथ कि मुझे अपने पूर्ववर्तियों के स्तर को प्राप्त करना है, किया। यह अच्छा हो या बुरा, पर मैं अति आत्म-विश्वास या अकाट्य आश्वस्ति से मुक्त रहा। मुझमें जन्मजात प्रतिभा तो नहीं थी लेकिन कठोर परिश्रम से बचने की प्रवृत्ति मुझमें कभी नहीं रही। मैं समझता हूं कि मुझमें यह अवचेतन भावना थी कि सामान्य व्यक्तियों के लिए सफलता की सीढ़ियां केवल उद्यम और सद्व्यवहार ही है।

—आत्मकथा, अध्याय १

मैं बाल्यकाल से ही बहुत सुकुमार प्रकृति का रहा हूं। सभा-समितियों में भाषण देने के पश्चात् भी मुझमें कोई अन्तर नहीं आया। लोगों की धारणा है कि मैं अहंकारी नहीं हूं। मैं चाहे कुछ भी क्यों न होऊं परन्तु अहंकारी नहीं हूं, क्योंकि मैं जानता हूं कि अहंकार करने योग्य मेरे पास कुछ भी नहीं है। मैं जहां बंध जाता हूं वहां अच्छी तरह से बंध जाता हूं।

—पत्रावली, पृ० २७३

मैं विश्वास दिला दूं कि अंधेरे में, उजाले में, गम और खुशी में, कष्ट-सहन और विजय में, मैं आपके साथ ही रहूंगा। इस समय तो मैं आपको भूख, प्यास, कठिनाई, जबरन कूच और मृत्यु के अलावा कुछ नहीं दे सकता। लेकिन यदि आप मेरा साथ जीवन और मरण में दें, जैसा कि मुझे विश्वास है कि

आप जरूर देंगे, तो मैं आपको विजय और स्वतन्त्रता तक पहुंचा दूगा।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१९४३)

मैं स्वयं को उन ३८ करोड़ देशवासियों का सेवक मानता हूं, जो विभिन्न धार्मिक विश्वासों में आस्था रखते हैं। मैं अपने कर्तव्यों का निर्वाह इस प्रकार करने के लिए दृढ़संकल्प हूं कि इन ३८ करोड़ लोगों का हित मेरे हाथों में सुरक्षित रहे और प्रत्येक भारतीय को मुझमें पूर्ण विश्वास का कारण रहे। यह अमंद राष्ट्रीयता और पूर्ण न्याय तथा निष्पक्षता के आधार पर निर्भर है, जिसे भारत की मुक्ति सेना निर्मित कर सकती है।

—आई० एन० ए० की कमान सभालने पर (२६-८-१९४३)

स्वदेशसेवी होने की स्पर्द्धा रखते हुए भी मैं एक मनुष्य हूं। भला ऐसा कौन है जो प्रेम और अपनत्व को प्राप्त करके सुखी न होता हो ? कुछ प्राप्त करने की आकांक्षा को जीतना अच्छा होता है। उच्च स्तर के कार्यकर्त्ताओं को तो प्रत्येक प्रकार के प्रतिदान की आकांक्षा को जय करना वांछनीय है। मेरे लिए तो अभी यह बात एक आदर्श के रूप में ही है।

—श्री अनाथबंधु दत्त को पत्र (१९२६)

स्वयं को स्वतंत्र करने और सत्य, न्याय एवं स्वाधीनता पर आधारित एक नवीन विश्व-व्यवस्था की नींव रखने का अब अच्छा अवसर है। मैं उन लोगों से, जिनके मस्तिष्क में किसी भी प्रकार का संदेह और शक है, आग्रह करता हूं कि वे मेरे ऊपर विश्वास करें। मैं सदैव केवल भारत के प्रति निष्ठावान रहूंगा। मै अपनी मातृभूमि को कभी धोखा नहीं दूगा। मैं भारत के लिए मरूंगा।—ब्रिटिश राजनीतिज्ञ मुझे न कभी प्रलोभित कर सके और न धोखा दे सके। कोई भी मुझे सही

मार्ग से विचलित नहीं कर सकता ।

—भारत स्वतंत्रता संघ अधिवेशन (सिंगापुर, ४-७-४३)

हमारे विचार या आदर्श अमर होंगे, हमारे भावी जाति की स्मृति से कभी नहीं मिटेंगे, भविष्य में हमारे वंशधर हमारी कल्पनाओं के उत्तराधिकारी बनेंगे, इस विश्वास के साथ मैं दीर्घ काल तक समस्त विपदाओं और अत्याचारों को हंसते हुए सहन कर सकूंगा।

—पत्रावली, पृ० २२६

अपराध

अपराध की प्रवृत्ति को मानसिक रोग मानना पड़ेगा, और उसी प्रकार उसका उपचार करना उचित होगा। प्रतिशोध-मूलक दंड-विधि को, जिसे काराशासन-विधि का मुख्य तत्त्व माना जा सकता है, सुधारमूलक दंड विधि में परिवर्तित करना पड़ेगा।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१६२५)

अपराधी

जनसाधारण की यह धारणा है कि जब अपराधियों को फांसी के तख्ते की ओर ले जाया जाता है उस समय उनमें एक स्नायविक दुर्बलता पैदा हो जाती है। परन्तु जो लोग किसी उद्देश्य के लिए जीवन अर्पित करते हैं वे ही वीरों के समान मर सकते हैं, परंतु यह विचार गलत है। इस सम्बन्ध में मैंने कुछ तथ्य संग्रह किए हैं और इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि बहुत से अपराधी साहस के साथ प्राण देते हैं। फांसी की रस्सी गले में डालने से पूर्व वे भगवान के चरणों में आत्मनिवेदन करते हैं। वे टूटे हुए से दिखलाई नहीं पड़ते। एक बार एक जेलर ने

मुझसे कहा था कि एक फांसी के कैदी ने उनके समक्ष यह स्वीकार किया था कि उसने एक व्यक्ति की हत्या की है। यह पूछने पर कि क्या उसे अपने कार्य से अनुताप हुआ, उसने बतलाया कि उसे तनिक भी अनुताप नहीं हुआ। उसने इसका कारण बतलाया कि उस व्यक्ति को मारकर उसने न्याय किया है। इसके उपरांत यह व्यक्ति वीरता के साथ फांसी के तख्ते पर चढ़ गया और अपने प्राण दे दिए।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२५-६-१९२५)

साधारण और राजनैतिक बन्दियों में पार्थक्य का एक निश्चित कारण है। राजनैतिक अपराधी यह जानते हैं कि मुक्ति के पश्चात् समाज उन्हें अपना लेगा। परन्तु साधारण अपराधियों को इस प्रकार की आशा नहीं होती। वे तो अपने घर के अतिरिक्त और कहीं से भी सहानुभूति की आशा नहीं कर सकते और इसीलिए जनसाधारण के समक्ष मुंह दिखाने में उन्हें लज्जा का अनुभव होता है।...मुझे इससे बहुत असंतोष है कि सभ्य समाज अपराधियों के प्रति सहानुभूति क्यों नहीं दिखाता।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

अभिभावकों से

अपने अनुभव से मैं अभिभावकों एवं माता-पिताओं को चेतावनी देना चाहूंगा कि उन्हें अपने संवेदनशील और भावुक प्रकृति के बच्चों से व्यवहार करते हुए बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। ऐसे बच्चों को किसी घिसी-पिटी लीक पर बलात् चलाने से कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि उन्हें जितना ही दबाया जाएगा वे उतने ही अधिक विद्रोही बनते जाएंगे और अंततः शायद एकदम जिद्दी बन जाएं। दूसरी ओर कुछ छूट के साथ

सहानुभूति और संयम से काम लेने पर उनकी ऊबड़-खाबड़ प्रकृति और झक्कीपन को सुधारा-संवारा जा सकता है और अगर वे किसी ऐसे विचार की ओर आकर्षित होते हैं जो सांसारिकता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो अभिभावकों को उनके प्रयास को विफल नहीं कर देना चाहिए या उस पर हंसना नहीं चाहिए बल्कि उन्हें समझाने की कोशिश करनी चाहिए और जरूरत हो तो समझा-बुझाकर ही उन्हें प्रभावित करना चाहिए।

—आत्मकथा, अध्याय ६

अभिव्यक्ति

हम जिस युग और विश्व में रहते हैं, उसमें हम अपनी सभी भावनाओं को पूर्णतः और सोच-विचार कर अभिव्यक्त नहीं कर सकते। हमें उनको अपने अन्दर रखना होता है। सम्पूर्ण प्रकृति हमें ऐसा करने को विवश कर रही है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६१७)

अरविंद

राजनीति में सक्रिय होने की खातिर उन्होंने अच्छी नौकरी छोड़ दी थी। कांग्रेस के मंच पर वे वामपक्षी विचारों के अलंबरदार बनकर खड़े हुए थे और एक ऐसे समय में स्वाधीनता के पक्ष में निर्भीक होकर बोले थे जबकि अधिकांश नेता, किसी तरह की झिझक महसूस किए बिना, केवल औपनिवेशिक स्व-शासन की बात करते थे। उन्होंने बड़े प्रशांत भाव से जेल की सजा झेली थी।

—आत्मकथा, अध्याय ६

रामकृष्ण और विवेकानंद ने एक और अनेक, ईश्वर और सृष्टि के समन्वय का जो उपदेश दिया था वह मुझे अच्छा तो लगा

था लेकिन यह भी मुझे मायावाद के जाल से मुक्त नहीं कर सका था। मुक्ति के इस कार्य में अरविंद से मुझे अतिरिक्त सहायता मिली। उन्होंने दार्शनिक स्तर पर आत्मा और पदार्थ, ईश्वर और सृष्टि में समन्वय सिद्ध किया और सत्य की उपलब्धि को विभिन्न विधियों के समन्वय द्वारा जिसे उन्होंने योग-समन्वय कहा उसकी परिपुष्टि की।

—आत्मकथा, अध्याय ६

अर्पण

सबसे बड़ा उपहार है, अपना हृदय किसीको देना। जब यह किया जाता है तो और कुछ देने को शेष नहीं रहता और जिसको वह प्राप्त होता है वह अत्यंत सौभाग्यशाली होता है। क्या कोई ऐसा है जो उससे अधिक भाग्यवान और प्रसन्न हो? लेकिन उससे अधिक कौन हो सकता है जो उस उपहार का प्रत्युत्तर नहीं दे सकता। परिणाम क्या होता है? परिणाम होता है दोनों के लिए शान्ति।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

असफलताएं

असफलताएं कभी-कभी सफलता की स्तंभ होती हैं। यदि हम चौथी बार भी असफल होते हैं तो कोई बात नहीं। प्रयत्न न करना, प्रयत्न करने और सफलताओं के प्राप्त करने में असफल हो जाने की अपेक्षा, अधिक अपमानजनक है।

—अखिल भारतीय फार्वर्ड ब्लाक नागपुर अधिवेशन मे अध्यक्षीय भाषण (१८-६-१९४०)

आंदोलन

किसी आंदोलन का विकास एक पेड़ के विकास के समान है। यह अन्दर से विकसित होता है और हर अवस्था पर यह

नई शाखाएं बाहर निकालता है, जिससे उत्तरोत्तर प्रगति हो सके। जब नई शाखाएं नहीं निकलतीं तो यह समझा जा सकता है कि आंदोलन ह्रास अथवा समाप्त होने की प्रक्रिया में है।

— फंडामेंटल क्यूस्चन ऑफ इंडियन रेवुल्यूशन पृ० ३३

आगे बढ़ते रहो

हमारा मार्ग भले ही खतरनाक और पथरीला हो, हमारी यात्रा भले ही कष्टदायक हो, हमें आगे बढ़ना ही है।

—भाई शरत्‌चन्द्र बोस को पत्र (कटक ८-१-१९१३)

आजाद हिंद फौज

हमारे लिए यह खुशी और गर्व की बात है कि आजाद हिंद फौज के रूप में भारत की मुक्ति-सेना बन गई है और उसके सैनिकों की संख्या लगातार बढ़ रही है।

—गांधीजी के जन्मदिन पर बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४३)

हिन्दुस्तान की आजादी की फौज बन गई है। यह फौज गठित होकर सिंगापुर पहुंच गई है, जो एक समय ब्रिटिश साम्राज्य-वाद का गढ़ था। यह फौज भारत से साम्राज्यवादी जुआ ही नहीं हटाएगी वरन् उसके बाद आजाद हिन्द की राष्ट्रीय सेना बन जाएगी। प्रत्येक भारतीय को पूरी तरह से भारतीय नेतृत्व में गठित सेना पर गर्व होना चाहिए और जब ऐतिहासिक मौका आएगा तब यह भारतीय नेतृत्व में लड़ाई के मैदान में उतर पड़ेगी।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१९४३)

आजादी का संघर्ष

भारत ही अकेला ऐसा देश नहीं है जहां आजादी के संघर्ष का आह्वान आध्यात्मिक जागरण के बाद हुआ हो। इटली के

रिसोर्जिमेंटो आन्दोलन में सबसे पहले मेजिनी ने इटलीवासियों को आध्यात्मिक प्रेरणा दी थी। उसके बाद ही योद्धा और नायक गैरीबाल्डी आए, जिन्होंने एक हजार सशस्त्र स्वयंसेवकों के नायक बनकर रोम की ओर कूच किया।

—बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४३)

आत्मत्याग

अगर किसीको निःस्वार्थ होना है तो वह अपने परिवार के लिए कष्ट और चिन्ता का कारण बनेगा ही। अगर हम स्वयं आत्मत्याग से दूर भागते हैं तो हम यह शिकायत नहीं कर सकते कि दूसरों में *आत्मत्याग की भावना नहीं है।*

—भाई शरत्चन्द्र बोस को पत्र (५-४-१९२१)

आत्मा में विश्वास

मैं आत्मा में क्यों विश्वास करता हूं ? क्योंकि वह व्यावहारिक आवश्यकता है। मेरी प्रकृति उसकी मांग करती है। मुझे प्रकृति में एक उद्देश्य और अभिकल्पना दिखाई देती है। मैं स्वयं अपने जीवन में उत्तरोत्तर विकसनशील उद्देश्य पाता हूं। मैं महसूस करता हूं कि मैं मात्र परमाणुओं का सपिंडन नहीं हूं। मुझे यह भी आभास होता है कि सत्य, अणुओं का आकस्मिक सम्मिश्रण मात्र नहीं है। इसके अलावा, सत्य को (जैसा कि मैं उसे समझता हूं) अन्य कोई भी सिद्धांत स्पष्ट नहीं कर सकता। यह सिद्धांत सक्षेप में एक बौद्धिक आवश्यकता है। कम-से-कम यह मेरे जीवन की तो एक अनिवार्यता है।

—आत्मकथा, अध्याय १०

आदमी

मैं बिल्कुल महसूस करता हूं कि सच्चा आदमी परिस्थितियों के दबाव से निर्मित न होकर उन्हें अपने अनुरूप ढाल लेगा।

—भाई शरत्चन्द्र बोस को पत्र (२३-४-१६२१)

आदर्श

आदर्श की प्राप्ति समर्पण की पूर्णता पर निर्भर है। त्याग और उपलब्धि एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अब मेरा मन सम्पूर्ण रूप से पाने और देने के लिए आकुल है।

—पत्रावली, पृ० २३१

आदर्श को प्रत्येक क्षण सामने न रखने से जीवन में प्रगति करना असम्भव है। जीवन की कोई भी अवस्था अशान्ति से रहित नहीं होती। इस तथ्य को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१६२६)

इस असार संसार में प्रत्येक वस्तु नष्ट होती है और नष्ट होगी; किन्तु विचार, आदर्श और स्वप्न नष्ट नहीं होते। कोई व्यक्ति एक विचार के लिए मर सकता है किन्तु वह विचार उसकी मृत्यु के बाद स्वयं को हजारों जीवनों में प्रस्फुटित करेगा। इसी प्रकार से विकास का चक्र चलता रहता है और एक पीढ़ी के विचार, आदर्श एवं स्वप्न आगामी पीढ़ी को उत्तराधिकार में मिल जाते हैं। इस संसार में कोई भी विचार और बलिदान अग्नि-परीक्षा के बिना कभी फलीभूत नहीं होता।

—क्रास रोड्स, पृ० ३८०

इस देश में ऐसे लोग हैं—और उनमें कतिपय प्रख्यात और आदरणीय पुरुष है—जो स्वतंत्रता के सिद्धान्तों को पूर्णतया लागू करने के लिए सहमत नहीं होंगे। हमें दुःख है यदि हम उन्हें प्रसन्न नहीं कर सकते किन्तु किसी भी परिस्थिति में हम

सत्य, न्याय और समानता पर आधारित आदर्श को नहीं छोड़ सकते। हम अपने रास्ते चलेंगे चाहे कोई साथ दे या न दे; किंतु तुम्हें आश्वस्त होना चाहिए कि यदि कुछ थोड़े हमारा साथ छोड़ते हैं तो हजारों और लाखों अंततः हमारी स्वतंत्रता की सेना में सम्मिलित होंगे। हमें बंधन, अन्याय और असमानता से कोई समझौता नहीं करना है।

—स्टुडेंट कान्फ्रेंस लाहौर मे अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

एक स्थल पर मिल्टन ने लिखा है—मष्तिस्क का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है, यह स्वर्ग को नरक और नरक को स्वर्ग बना सकता है। यह बात तो सत्य है कि इस तथ्य को हर स्थिति में लाभदायक नही माना जा सकता, परन्तु आदर्श को प्रत्येक क्षण सामने न रखने से जीवन में प्रगति करना असम्भव है। जीवन की कोई भी अवस्था अशान्ति से रहित नहीं होती। इस तथ्य को विस्मृत नही किया जा सकता।

—श्री हरिचरण बागची के नाम पत्र (६-२-१९२६)

जगत में सब-कुछ क्षणभंगुर है, केवल एक वस्तु नष्ट नहीं होती, वह वस्तु है भाव या आदर्श। हमारे आदर्श ही हमारे समाज की आशा हैं। हमारी विचारधारा अनश्वर है। क्या कोई निजी भाव को दीवार से घेरकर रख सकता है?

—पत्रावली, पृ० २३१

जब मैंने अपना यह आदर्श बना दिया है कि मैं अपना धन जनहित के लिए बांट दूगा, तब यदि मैं किसी स्वार्थ को हृदय में स्थान दू तो निश्चय ही मेरा पतन हो जाएगा। यह सब बातें कहने और लिखने के उपरान्त भी मैं पर्याप्त मात्रा में स्वार्थी हूं, और अपने लिए मैं बहुत कुछ करता हूं। इसका कारण यह है कि एक दिन में तो आदर्श प्राप्त किया नहीं जा

सकता, और स्वार्थपरता से मुक्त होने के लिए तो बहुत दिन तक साधना करने की आवश्यकता पड़ती है।

—पत्रावली, पृ० २२५

जीवन के दो पक्ष होते हैं—बुद्धि और चरित्र। इतना ही काफी नहीं है कि तुम देश को केवल चरित्र अर्पित करो। तुम्हें बौद्धिक आदर्श भी दे सकना चाहिए।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

तत्त्वज्ञानरहित मनुष्य (भावात्मक दृष्टि से मैं उन्हें तत्त्वज्ञान-हीन ही कहता हूं) का भी अपना आदर्श होता है। वे जिसको पूज्य मानकर उस प्रेमनिधि से श्रद्धा और प्रेम करते हैं उससे दुःख से जूझते समय भी, उन्हें साहस और विश्वास मिलता है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२५-६-१९२५)

मेरी यह आस्था है कि अगर हमारा कोई आदर्श है तो उसे हम जीवन में उतार सकते हैं। उदाहरण के लिए अगर हमारा आदर्श पूर्णता प्राप्त करना है तो हम पूर्ण हो सकते हैं, अन्यथा पूर्णता के आदर्श का कोई मतलब ही नहीं रह जाता।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-९-१९१५)

यदि जीवन में मैं और कोई काम नहीं कर सका, आदर्श को यदि वास्तविकता के रूप में प्रकट करने का अवसर प्राप्त नहीं कर सका, तब भी मेरा जीवन व्यर्थ नहीं जाएगा। महान् आदर्श को यदि हृदय में रखूं, शरीर और मन को यदि उस महान् आदर्श स्वर में बांधकर रहूं, यदि आदर्श से मेरा अस्तित्व मिला रहे, तो मैं संतुष्ट हूं।

—पत्रावली, पृ० २३१

स्वतंत्रता और सत्य ही हमारे आदर्श हैं। जिस प्रकार रात्रि के पश्चात् दिन निकलता है उसी प्रकार हमारे प्रयत्न भी सत्य

हैं, और सत्य को निश्चित रूप से सफलता मिलेगी। हमारा शरीर नष्ट हो सकता है। अटल विश्वास और अजेय संकल्प के कारण हमारी विजय अवश्य होगी। यह तो केवल ईश्वर ही जानता है कि हमारे प्रयासों के सफल परिणाम को देखने का सौभाग्य किसे प्राप्त होगा। अपने सम्बन्ध में तो यही कह सकता हूं कि अपना कार्य करता जाऊंगा परिणाम जो होगा, देखा जाएगा।

—पत्रावली, पृ० २४२-२४३

हममें आज केवल एक इच्छा होनी चाहिए, मर जाने की इच्छा जिससे भारत जीवित रहे, शहीदों की मृत्यु का सामना करने की इच्छा, ताकि स्वतंत्रता का मार्ग शहीदों के रक्त से आवृत्त हो सके।

—*भारतीय धरती पर आई० एन० ए० (४-७-१९४४)*

आधुनिकीकरण

हम संसार में अलग-थलग होकर नहीं रह सकते। जब भारत आजाद हो जाएगा तो वह अपने आधुनिक दुश्मनों से आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में आधुनिक तरीकों से लड़ेगा। बैलगाड़ी वाले दिन बीत गए और सदैव के लिए पीछे छूट गए। जब तक सारा संसार हृदय से निरस्त्रीकरण की नीति स्वीकार नहीं कर लेता, स्वतंत्र संसार को सभी परिस्थितियों के लिए तैयार रहना है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता मे भाषण (२५-१२-१९२८)

आयु

आयु का अधिक होना ज्ञान, पाण्डित्य, अनुभव अथवा चरित्र आदि का द्योतक नहीं है और न युवा होना कोई जुर्म है।

—पत्रावली, पृ० २७६

आलोचना

जब हम दूसरों की आलोचना करें, हम नियंत्रण और आत्मसंयम रखें। आत्मसंयमी और शालीन होकर हम कुछ खोएंगे नहीं वरन् हम अधिक प्राप्त कर सकेंगे।

—ऑल इंडिया नौजवान भारतसभा, करांची में अध्यक्षीय भाषण (२७-३-१९३१)

आशा-निराशा

मेरे मन पर निराशावादी छाया कभी-कभी पड़ती है, लेकिन आशा फिर लौट आती है, जैसे आकाश में बिजली कौंध जाए। उसे कौन दबा सकता है? वह आलोक जीवन को एक बार फिर वांछनीय बना देता है और मैं नये सिरे से पाता हूं कि जीवन जीने योग्य है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-९-१९१५)

आशावाद

आज हमें भारत में सक्रिय दर्शन की आवश्यकता है। हमें ठोस आशावादिता से प्रेरित होना है। हमें वर्तमान काल में रहना है और अपने आपको आधुनिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाना है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता में भाषण (२५-१२-१९२८)

मैं जन्मजात आशावादी हूं और मैं किसी भी परिस्थिति में हार स्वीकार नहीं करूंगा।

—बर्मा से प्रस्थान (२४-४-१९४५)

आश्रम

हमारे पवित्र देश में आश्रम कोई नई संस्था नहीं है और साधु और योगी होना कोई नई बात नहीं। हमारे समाज में

इनका सम्मानपूर्ण स्थान रहा है और रहेगा, लेकिन यदि हमें एक स्वतंत्र, सुखी और महान् नया भारत बनाना है तो इनके नेतृत्व का हमें अनुकरण नहीं करना है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता में भाषण (२५-१२-१९२८)

आह्वान

उस कर्तव्य कर्म के लिए कमर कस लो जो तुम्हारे सामने है। आदमी, धन और साधन स्वयं विजय और स्वतंत्रता नहीं ला सकते। हममें प्रेरक शक्ति होनी चाहिए जो हमें बहादुरी के कार्यों और वीरोचित कर्तृत्व के लिए प्रेरित करेगी।

—भारतीय धरती पर आई० एन० ए० (४-७-१९४४)

जिस गहन अंधकार में आज सम्पूर्ण देश डूबा हुआ है, जिस विपन्नावस्था और हाहाकार में आज स्वर्णभूमि बंगाल श्मशान के समान हो रहा है, उसमें नये आलोक का संचार, नई शक्ति का उन्मेष, नये उत्साह का उद्दीपन आपके अतिरिक्त और कौन कर सकता है? जिस आह्वान से आपने एक दिन बंगालियों की नस-नस में जन-जीवन का संचार किया था, उसीसे अब आप बंगालियों को जाग्रत करें। जिस मन्त्र-बल से आपने एक दिन बंगाल के घर-घर में प्राण-प्रतिष्ठा की थी, उसी मन्त्र के साथ महाशक्तिरूपा होकर आप फिर हमारे मध्य अवतरित हों तो यह अवसाद क्षणभर मे समाप्त हो जाएगा। फिर हृदय में नवीन प्रेरणा, नया उत्साह आएगा, आशा के अरुण राग से रंजित होकर दसों दिशाएं फिर हंस उठेंगी। बंगाल का सम्पूर्ण तरुण समाज आपके चरणों में भक्तिअर्घ्य देगा।

—श्रीमती वासन्तीदेवी के नाम पत्र (६-७-१९२५)

मित्रो, हम अपने देश के इतिहास के बहुत ही नाजुक दौर में पहुंच गए है और यह उचित होगा कि हम अपनी सारी

शक्तियों को एकत्र करें तथा जो भी शक्तियां हैं उनके विरुद्ध कठोर पग उठाएं। हम कंधे से कंधा मिलाकर खड़े हों और एक हृदय तथा एक स्वर से कहें कि हमारा उद्देश्य है—संघर्ष, अन्वेषण, उपलब्धि, न कि आत्मसमर्पण।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना में अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

मैं कामना करता हूं कि आपके सभी कार्य हमारे ही समान हों। इस समान कर्तव्य में, इस संघर्ष में, इस पीड़ा में और त्याग में हम सबको—पुरुष-स्त्री, लड़के अथवा लड़की, निर्धन अथवा धनी, युवक अथवा वृद्ध का अन्तर किए बिना कंधों से कंधे मिलाकर खड़े होना चाहिए। अन्तिम युद्ध प्रारम्भ करना चाहिए और भारत की मुक्ति के दिवस के लिए शीघ्रता करनी चाहिए।

—भारतीय स्वतन्त्रता लीग, सिंगापुर की महिलाओं को संबोधन (१२-७-१९४३)

सुबह से पहले अंधेरी घड़ी अवश्य आती है। बहादुर बनो और संघर्ष जारी रखो क्योंकि स्वतंत्रता निकट है।

—आजाद हिंद रेडियो जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

हम आम जनता, मजदूरों और किसानों के लिए स्वराज्य चाहते हैं। इसलिए मजदूरों और किसानों का कर्त्तव्य है कि जब भारत का भविष्य निर्मित हो रहा है तो ऐसे अवसर पर वे अगुआ होकर सामने आएं। यह प्राकृतिक नियम है कि जो आजादी के लिए लड़ते हैं और उसे प्राप्त कर लेते है, वे ही शक्ति और उत्तरदायित्व को अपने पास रखते हैं।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

इच्छा-शक्ति

मेरे विचार से जो अतिमानस स्थिति के अस्तित्व को नहीं मानते, वे भी इच्छा-शक्ति के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं और यह शक्ति—चाहे आप इसे किसी भी नाम से पुकारें—बराबर अपना काम करती है चाहे इस शक्ति का आह्वान करने वाला उसे ग्रहण करने की पूरी क्षमता न रखता हो।

—पत्रावली, पृ० २८४-२८५

इनसीन जेल

इनसीन भी लगभग रंगून जैसा ही है। हां, मैं समझता हूं कि गर्मियों में उतना गरम नहीं है। यहां वर्षा खूब होती है। मई के अन्त तक वर्षा आरम्भ हो जाती है और अक्टूबर तक होती रहती है। मेरे अनुमान से यह मांडले जैसा तो गर्म नहीं है, पर उससे अधिक नम अवश्य है।

—पत्रावली, पृ० २३३

ईश-प्रार्थना

दयालु परमेश्वर ने हमें यह जीवन दिया है, यह स्वस्थ शरीर दिया है, बुद्धि और शक्ति दी है। ये सब बड़े बहुमूल्य वरदान है। लेकिन किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ये हमें मिलते हैं? भगवान ने हमें इतना सब-कुछ निस्सन्देह इसलिए दिया है कि हम उसकी पूजा करें और उसका कार्य करें। लेकिन मां! क्या हम उसका कार्य करते है? हम दिन में एक बार भी तो हृदय से उसकी प्रार्थना नहीं करते। सच मां, यह सोचकर बहुत ही पीड़ा और निराशा होती है कि हम उसे शायद ही कभी पुकारते हों, जो हमारे लिए इतना सब-कुछ कर रहा है, जो सदैव हमारा सखा है, सुख-दु ख का सहचर है, हम चाहे घर में हों या

वन में, जिसका निवास हमारे हृदय में है, और जो हमारे इतने निकट है कि हमारा अपना ही है। हम महत्त्वहीन सांसारिक चीजों के लिए रोते हैं, लेकिन उस परमेश्वर के लिए हमारी आंखों में कभी एक भी आंसू नहीं उमड़ता।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

ईश्वर

उस लीलामय ने हमें संसार के भौतिक पदार्थों की लालसा से प्रेरित किया है और माया के मोह-जाल में उलझाया है। यह वैसा ही है जैसे मां अपने घरेलू काम-काज में व्यस्त हो, और शिशु अपने खिलौनों में। जब तक बच्चा अपने खिलौनों को परे हटाकर अपने हृदय की सम्पूर्ण शक्ति से मां के लिए रोता नहीं है, तब तक मां उसके पास नहीं आती। यह मान-कर कि अभी तो बच्चा खेल में उलझा है, मां समझती है कि उसे उसके पास जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन जब बच्चे की चीख उसके कानों में पड़ती है, वह तुरन्त दौड़कर उसके पास आ पहुंचती है। यही खेल जगन्माता भी हमारे साथ खेल रही है। भगवान को कोई भी तब तक नहीं पा सकता, जब तक उसके प्रति समर्पण शत-प्रतिशत न हो। यदि भगवान को केवल कुछ अंश तक ध्यान देकर पाया जा सकता तो वे सब लोग, जो सांसारिक सुखों में डूबे हैं, उसे पाने से क्यों वंचित रह जाते? उसके बिना सब-कुछ शून्य है—नितान्त शून्य, उसके बिना व्यक्ति का जीवन एक विडम्बना है, एक असहनीय भार है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

दयालु परमेश्वर जो कुछ भी करता है, संसार के हित के लिए करता है। इसकी अनुभूति हमको आरम्भ में नहीं होती थी,

क्योंकि हमारी बुद्धि तब कच्ची थी। जब हमें यह अनुभूति होने लगती है तभी हम जान पाते है कि वास्तव में जो कुछ भी भगवान कर रहा है वह हमारी अच्छाई के लिए है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

भगवान की अनुभूति और अभिव्यक्ति के बिना जीवन व्यर्थ है। मनुष्य जो भी पूजा, अर्चना, ध्यान, चिन्तन-मनन और प्रार्थना आदि करता है उसका एक ही उद्देश्य है—भगवान की प्रत्यक्षानुभूति। यदि यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता तो उसका सभी प्रयास व्यर्थ है। जिसने एक बार भी ऐसे दिव्य आनन्द की रसानुभूति कर ली, वह फिर कभी भी पाप पूर्ण भौतिक जगत् की ओर दृष्टि नहीं डालेगा।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

मुझे अक्सर यह अचंभा होता है कि लोग धन और सम्पत्ति मात्र से कैसे संतुष्ट हो पाते हैं? उसके बिना, जो समस्त सुखों की खान है, जीवन में कभी भी शाश्वत सुख नहीं मिल सकता। अगर हमें चिर-संतोष प्राप्त करना है तो हमें उस तक पहुंचना होगा जो सभी प्रसन्नताओं का अक्षय स्रोत है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

ईश्वरचन्द विद्यासागर

ईश्वरचन्द विद्यासागर का पालन-पोषण एक कट्टर पंडित के तौर पर हुआ परन्तु वह आधुनिक बंगला गद्य के निर्माता और पाश्चात्य विज्ञान तथा संस्कृति के उन्नायक बने। साथ ही वह एक महान् समाज-सुधारक तथा परोपकारी भी थे। वह जीवन-पर्यन्त एक कट्टर पंडित के सादे और तपस्वी जीवन को अपनाए रहे। उन्होंने साहसपूर्वक हिन्दू विधवाओं के पुनर्विवाह के पक्ष में आवाज उठाई।

—आत्मकथा, अध्याय ३

उठो, जागो

भारत ने अपना लगभग सब कुछ खो दिया—उसने अपनी आत्मा तक खो दी है। लेकिन हमें फिर भी चिन्तित नहीं होना चाहिए और आशा नहीं छोड़नी चाहिए। किसी कवि ने कहा है, तुमको अपना पौरुष फिर से प्राप्त करना है। हां, हमें अवश्य ही फिर से मनुष्य बनना है। इस सुन्दर भारत देश में इस समय ऐसे लोग विचर रहे हैं जो निर्जीव अतीत की प्रेतात्माओं के समान हैं। चारों ओर निराशा है, मौत है, आरामतलबी है, बीमारी है, अटूट दुःख है—भारत के संपूर्ण क्षितिज पर दुर्भाग्य के बादल छा गए हैं। ··लेकिन इस सम्पूर्ण निराशा, जड़ता, निर्धनता और भुखमरी के होते हुए भी तथा एक ओर भूख से पीड़ित लोगों की चीख-पुकार को डुबोते हुए, और दूसरी ओर विलासिता के दलदल में फंसे लोगों की पाखंडपूर्ण खिलखिलाहट को अनसुनी करते हुए, हमें दुबारा भारत का राष्ट्रीय संगीत छेड़ना है और वह है···उत्तिष्ठ, जाग्रत। ··उठो, जागो।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२७-१२-१९१५)

उत्तरदायित्व समझें

हम हाथ पर हाथ रखकर नहीं बैठेंगे। मैं कह चुका हूं कि युवा पीढ़ी अपने उत्तरदायित्व को भली भांति समझती है और वह पूरी तरह तैयार है। हमें अपने कार्यक्रम पर पूरी तरह विचार कर लेना चाहिए और अपनी पूर्ण योग्यता से इसे क्रियान्वित करने की योजना बनानी चाहिए।

—कलकत्ता अधिवेशन में भाषण (दिसम्बर, १९२८)

उद्धार होगा

समय-समय पर पाप और अन्धकार से परिपूर्ण धरती पर सत्य, ज्ञान, प्रेम और पवित्रता का प्रकाश जिस प्रकार फैलता

रहा है, उससे हमें आशा बधती है कि अभी ऐसी स्थिति नहीं आई है कि हमारा उद्धार हो ही न सके। यदि ऐसा हो तो परमेश्वर इस धरती पर बार-बार मनुष्य के रूप में क्यों अवतरित होता?

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

उद्योग

हम यह विश्वास नहीं करते कि भारत बिना शस्त्रों के प्रयोग के स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता है, अतः हमको शस्त्रों के निर्माण के लिए आधुनिक उद्योगों को अपनाना होगा। हमको शत्रु से आधुनिक तरीकों से और आधुनिक शस्त्रों से लड़ना है अतः आधुनिक उद्योग हमारे लिए आवश्यक हैं।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सबोधन (नवम्बर, १९४४)

उपासना

जिसे हम पाना चाहते हैं उसका सम्पूर्ण हार्दिकता और सच्चाई से आह्वान करें। इससे अधिक की जरूरत क्या है? जब चन्दन और फूल का स्थान हमारी भक्ति और प्रेम ग्रहण कर लेते है तो वह विश्व की सबसे सुन्दर उपासना बन जाती है। शान-शौकत और भक्ति का कोई मेल नही है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१९१२-१३)

एकतंत्रवाद

एकतंत्रवाद के अन्तर्गत योग्य व्यक्तियों का टोटा हो जाता है और इससे उसके उद्देश्य को क्षति पहुंचती है। यह स्वाभाविक है और संवैधानिक भी कि जो ज्ञान, विवेक, अनुभव आदि में श्रेष्ठ है उसकी आवाज परिषद् में अधिक सुनी जाएगी और शेष लोग उसके विचारों के प्रति अधिक ध्यान देंगे। लेकिन वे उसके

परामर्श को तात्विक मूल्य के कारण ही स्वीकार करेंगे और तदनुसार कार्य करेंगे, न कि इसलिए कि वह उस व्यक्ति की सलाह है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-६-१६२५)

औद्योगीकरण

औद्योगीकरण का अर्थ यह नहीं है कि हम अपने कुटीर उद्योगों की ओर से विमुख हो जाएं। इसका अर्थ केवल यह है कि हमको यह निर्णय करना होगा कि कौनसे उद्योग कुटीर आधार पर विकसित किए जाने चाहिए और कौनसे बड़े पैमाने पर। उस विशेष राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में, जो आज भारत में विद्यमान है और अपने लोगों के सीमित साधनों को ध्यान में रखते हुए हमको बड़े पैमाने के उद्योगों के साथ-साथ कुटीर उद्योगों के विकास का भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

—क्रास रोड्स, पृ० ६८

कोई भी औद्योगिक प्रगति तब तक संभव नहीं है जब तक कि हम उससे पहले औद्योगिक क्रान्ति के संघर्षमय दौर से न गुजरें। भले ही हम पसंद करें या न करें किन्तु हमें इस तथ्य से समझौता करना होगा कि आधुनिक इतिहास का वर्तमान युग औद्योगिक क्रान्ति से बचा नहीं रह सकता।

—क्रास रोड्स, पृ० ५२

बेकारी की समस्या को हल करने के लिए औद्योगीकरण परम आवश्यक है। यद्यपि वैज्ञानिक खेती से उत्पादन में वृद्धि होगी, यदि हर स्त्री व पुरुष को भोजन देना है तो जनसंख्या के एक बड़े भाग को कृषि से उद्योगों की ओर प्रत्यावर्तित करना होगा।

—क्रास रोड्स, पृ० ५४

हमारा ध्येय यह देखना है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष और बच्चे को बेहतर वस्त्र प्राप्त हों, बेहतर शिक्षा प्राप्त हो और उसके पास मनोरंजन एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त अवकाश हो। अगर इस उद्देश्य को प्राप्त करना है तो औद्योगिक उत्पादन की मात्रा में काफी वृद्धि करनी होगी, आवश्यक कार्यशालाओं का गठन करना होगा और गांव की आबादी के एक बड़े भाग को औद्योगिक व्यवसायों की ओर मोड़ना होगा।

—क्रास रोड्स, पृ० ६७

कर्त्तव्य

हमारे विशाल देश में प्रत्येक परिवार को अपनी विनम्र श्रद्धांजलि लेकर आगे बढ़ना होगा और जब तक हम अपने कर्त्तव्य का निर्वाह नहीं करते हमें यह शिकायत करने का कोई अधिकार नही है कि हमारे नेता स्वार्थी है।

—भाई शरत्चन्द्र बोस को पत्र (२३-४-१९२१)

कर्म

यदि कर्म की व्याख्या विस्तृत दृष्टिकोण से करें तो क्या परमात्मा ने हमें कार्य करने के लिए अलग-अलग क्षेत्र नियत नहीं किए है ? और क्या यह क्षेत्र हमारे पूर्व-जन्म के संस्कारों, हमारी वर्तमान इच्छाओं और हमारे वातावरण के अनुसार हमें नहीं मिला है ? फिर भी हमारे लिए अपने कार्य-क्षेत्र को पहिचानना अथवा उसकी अनुभूति करना कितना कठिन कार्य है। यह कार्य-क्षेत्र हमारे धर्म का बाह्य रूप है। कहना तो बड़ा सरल है कि 'स्वधर्म के अनुसार जीवन व्यतीत करो', परन्तु यह जान लेना बहुत ही कठिन है कि हमारा 'धर्म' क्या है ? यहीं पर आकर 'गुरु' की आवश्यकता पड़ती है; अपितु मैं तो यह कहूंगा कि उसके बिना काम नही चल सकता।

—पत्रावली, पृ० २८५

हमारा रक्षक भगवान है और उसकी इच्छा सर्वोपरि है। हम सब कोई इसकी लीला के सहचर हैं, और हममें कितनी शक्ति है, यह उसकी कृपा पर निर्भर करता है। हम बगिया के माली हैं और वह मालिक है। हम बगिया में काम करते हैं, लेकिन वहां के फल-फूल पर हमारा कोई अधिकार नहीं है। जो भी फल वहां होते हैं उन्हें हम उसके चरणों में अर्पित कर देते हैं। हमें केवल काम करने का अधिकार है, कर्म ही हमारा कर्त्तव्य है। कर्म फल का स्वामी वह है, हम नहीं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

कला

यदि हमारे गुणी कलाकारों ने कला को जीवन से अविलम्ब सम्बद्ध नहीं किया तो हमारी क्या स्थिति होगी इसकी कल्पना मात्र से रोमांच हो जाता है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (६-१०-१९३४)

कला और संगीत

कला और उसके आनन्द को [illegible] के लिए भी बोधगम्य बनाना पड़ेगा। संगीत की [illegible] तो एक संकुचित सीमा में अवश्य रहेगी परन्तु उसे जनसाधारण के उपभोग के योग्य भी बनाना पड़ेगा। [illegible] के अभाव से, जैसे संगीत का आदर्श नष्ट हो जाता है, वैसे ही जनसाधारण के लिए सुलभ न होने पर भी कला और जीवन का सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है। मेरे विचार से तो कला, लोकसंगीत और लोकनृत्य के द्वारा ही जीवन से [illegible] है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र ([illegible])

कलाकार

जो इस जन्म में कलाकार नहीं बन सका, तो फिर वह कभी भी कलाकार न बन सकेगा। मेरा विश्वास है कि कला प्रकृति की देन है, मानव-प्रयास का फल नहीं।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

कष्ट-सहन

अपनी राष्ट्रीय आजादी के लिए जितनी अधिक याचनाएं हमें भोगनी पड़ेंगी, जितना अधिक त्याग हमें करना पड़ेगा, उसी मात्रा में भारत की इज्जत भी दुनिया की नजरों में बढ़ेगी।

—आजाद हिन्द रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

कष्टों का निःसंदेह एक आंतरिक नैतिक मूल्य होता है।

—क्रास रोड्स, पृ० ३९९

कस्तूरबा

वह भारतीय नारीत्व का आदर्श थी—शक्तिशाली, सहिष्णु, शांत और स्वयं पूर्ण। कस्तूरबा लाखों भारतीय पुत्रियों के लिए प्रेरणास्रोत थी, जिनके बीच में वह घूमीं, और जिनसे वह मातृभूमि की स्वतंत्रता के संघर्ष में मिलीं। दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के दिनों से उन्होंने अपने महान् पति के कष्टों और परीक्षाओं में हिस्सा बंटाया।

…जब तक अंग्रेज भारत में रहते हैं हमारे राष्ट्र के प्रति ये नृशंसताएं और अत्याचार अनियंत्रित रूप से जारी रहेंगे। अब मात्र एक रास्ता है, जिससे भारत के युवक-युवतियां श्रीमती कस्तूरबा गांधी की मृत्यु का प्रतिशोध ले सकती हैं और वह है भारत से ब्रिटिश शासन का पूर्ण समापन।

—कस्तूरबा के स्वर्गवास पर (२२-७-१९४४)

काम पर विजय

काम पर विजय प्राप्त करने का प्रमुख उपाय है सब स्त्रियों को मातृरूप में देखना और स्त्री मूर्तियों जैसे दुर्गा, काली, भवानी का चिन्तन करना। स्त्री-मूर्ति में भगवान या गुरु का चिन्तन करने से मनुष्य शनैः शनैः सब स्त्रियों में भगवान के दर्शन करना सीखता है। उस अवस्था में पहुंचने पर मनुष्य निष्काम हो जाता है। इसीलिए महाशक्ति को रूप देते समय हमारे पूर्वजों ने स्त्री मूर्ति की कल्पना की है। व्यावहारिक जीवन में सब स्त्रियों को मां के रूप में सोचते-सोचते मन शनैः-शनैः पवित्र हो जाता है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२९)

काम-वासना

मेरा विश्वास है कि काम-वासना की पूर्ति से बचाव और कामोत्तेजना पर नियन्त्रण आसानी से हो सकता है। लेकिन किसी को यदि वैसी आध्यात्मिक उन्नति करनी है, जिसका निरूपण भारतीय योगियों और ऋषि-मुनियों ने किया है तो केवल उतना ही यथेष्ट नहीं है। आवश्यकता होती है उस मानसिक पृष्ठभूमि को, उन वृत्तियों और प्रेरणाओं को रूपान्तरित करने की, जिसमें काम-वासना का उद्गम होता है। जब यह कार्य सिद्ध हो जाता है तो किसी स्त्री या पुरुष में कामोत्तेजना का संचार करने की क्षमता निःशेष हो जाती है तथा उस पर औरों की ऐसी क्षमता का कोई असर नहीं होता। वह वस्तुतः पूरी तरह कामातीत हो जाता है।

—आत्मकथा, अध्याय ६

कारावास

मनुष्य को विवश होकर जेल में जिस निर्जनता में रहना पड़ता है, वही निर्जनता उसे जीवन की महत्त्वपूर्ण समस्याओं को भली भांति समझने का अवसर देती है। स्वयं मैं अपने सम्बन्ध में कह सकता हूं कि मेरे व्यक्तिगत और समष्टिगत जीवन के बहुत जटिल प्रश्न एक वर्ष पहले की अपेक्षा अब समाधान के अधिक निकट पहुंचते जा रहे हैं। जिस विचार को पहले धुंधले रूप में देखता था आज वही बहुत स्पष्ट हो उठा है। और किसी कारण से, भले ही कुछ लाभ न हो, परन्तु अपनी अवधि समाप्त होने तक मुझे आध्यात्मिक क्षेत्र में बहुत लाभ होगा।

—*श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)*

यदि मैं स्वयं कारावास नहीं भोगता तो एक अपराधी या बन्दी को उचित सहानुभूति की दृष्टि से नहीं देख सकता था। मुझे इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि हमारे देश के कलाकार और साहित्यकार कारावास के जीवन से परिचित होते तो हमारा शिल्प, साहित्य और भी समृद्ध होते। सम्भवतः यह भी नहीं कहा जा सकता कि काजी नजरुल इस्लाम की कविता उनके जेल जीवन की अभिज्ञता की कितनी ऋणी है?

—*श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)*

कार्यकर्ता

हमारे राजनीतिक कार्यकर्ताओं को शिक्षा और प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि हम भविष्य में अधिक अच्छे नेताओं को तैयार कर सकें।

—*हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१९-२-१९३८)*

किसान

अहिंसक गुरिल्ला आंदोलन में किसान सदैव ही निर्णायक भूमिका निभाते है।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

कृतज्ञता

अपनी पर्वत के समान विशाल विपत्ति और दुःख को दूर रखकर जो व्यक्ति दूसरों के लिए आंसू बहाते हैं उनके प्रति लोग कृतज्ञ हुए विना रह नही सकते।

—श्रीमती बासंतीदेवी को पत्र (२३-१-१९२६)

केशवचन्द्र

वह अपने समय के एक नायक थे। और ओजस्वी वक्तृत्व में जो आध्यात्मिक तेज होता था, उससे सम्पूर्ण समाज का नैतिक स्तर ऊंचा उठता था, विशेषतया उक्त पीढ़ी को बहुत प्रेरणा प्राप्त होती थी।

—आत्मकथा, अध्याय ३

क्रान्ति

किसीके जीवन में कोई भी महान् उपलब्धि, चाहे वह आंतरिक हो या बाह्य, क्रान्ति के विना संभव नहीं होती। और इस क्रान्ति के दो चरण है—संशय और पुनर्निर्माण।

—आत्मकथा, अध्याय ६

खादी

मुझे यह कहने में प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि भारत में खादी सहस्रों भूखे मुखों के लिए भोजन लेकर आई है।··· उन लाखों भारतीयों को जो भूख की सीमा में रहते है, खादी जीविका का साधन उपलब्ध करा सकती है।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना मे अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

खुशामद

मैंने जीवन में कभी किसीकी खुशामद नहीं की। दूसरों को अच्छी लगने वाली बातें करना मुझे नहीं आता। अपने नेता के जीवन-काल में जब सब लोग उनको सन्तुष्ट करने के लिए उनकी मनचाही बातें किया करते थे तब भी मैं अप्रिय सत्य कहकर उनसे लड़ता रहता था।

—पत्रावली, पृ० २३५

खून दो

हम अपने खून से अपनी स्वतंत्रता का मूल्य चुकाएंगे लेकिन ऐसा करके हम राष्ट्रीय एकता की नींव रखेंगे। हम अपनी आजादी को बनाए रखने में तभी समर्थ होंगे जबकि हम इसे अपने बलिदान और खून देकर प्राप्त करें।

—भारत स्वतन्त्रता संघ अधिवेशन (सिंगापुर, ४-७-४३)

खेल-कूद

अपने विगत जीवन पर दृष्टि डालते हुए मुझे सोचना पड़ता है कि खेल-कूद के प्रति मुझे लापरवाही नहीं दिखानी चाहिए थी। ऐसा करके मैंने शायद असमय प्रौढ़ता की भावना विकसित कर ली और अंतर्मुखता की प्रवृत्ति में वृद्धि हुई। समय से पूर्व की परिपक्वता अच्छी नहीं होती, चाहे वह किसी वृक्ष की हो, या व्यक्ति की और उसका खमियाजा आगे चल-कर भुगतना ही होता है।

— आत्मकथा, अध्याय ५

गणतंत्र

शासन के प्रजातांत्रिक, गणतंत्रीय स्वरूप भारत में प्राचीन काल में भी विद्यमान थे। वे बहुधा सजातीय जनजाति अथवा जाति पर आधारित होते थे। महाभारत में यह जनजातीय

गणराज्य 'गण' के रूप में जाने जाते थे। इन पूर्ण गणतंत्रों के अतिरिक्त राजतंत्रों में भी लोगों को एक बड़ी सीमा तक स्वातंत्र्य प्राप्त था, क्योंकि राजा वस्तुतः एक संवैधानिक शासक हुआ करता था। अंग्रेज इतिहासकारों ने निरंतर इस तथ्य की उपेक्षा की है।

—दि इंडियन स्ट्रगिल, पृ० ७

गांधी

अपनी हिमालय जैसी गंभीर भूलों के बाद भी महात्माजी नहीं बदलेंगे। यह उपवास यदि नैतिक दबाव नहीं है तो क्या है और अहिंसा के पुजारी को इसके सहारे की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए? यह तथ्य कि वे उपवास के प्रश्न पर एक आंतरिक प्रकाश को देख सकते हैं, हिंसा के स्वभाव को नहीं बदल सकता। यह नैतिक दबाव अथवा हिंसा को अहिंसा में परिवर्तित नहीं कर सकता।

जब यतीन्द्रदास ने भूख हड़ताल का सहारा लिया और अपने को उत्सर्ग कर दिया तो महात्मा ने उनके संबंध में सहानुभूति का एक भी शब्द नहीं कहा। यथार्थ में उन्होंने एक मित्र को यह लिखा कि वे यदि अपना मुंह खोलते तो वे कोई निंदनीय बात ही कहते।

—क्रास रोड्स, पृ० ३६५

गांधी कुछ अर्थों में, एक जटिल व्यक्तित्व है। गांधी के दो पक्ष हैं—गांधी एक राजनीतिक नेता के रूप में और गांधी एक दार्शनिक के रूप में। हम उनका अनुसरण एक राजनीतिक नेता की हैसियत से करते रहे हैं परन्तु हमने उनके दर्शन को स्वीकार नहीं किया है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधन (नवम्बर, १९४४)

बीस वर्षों से भी अधिक समय से महात्मा गांधी भारत की मुक्ति के लिए कार्य कर रहे हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि यदि वह १९२० में संघर्ष का नया हथियार लेकर सामने नहीं आते तो संभवतः भारत अब तक पददलित ही रहता। भारत की आजादी के लिए उनकी सेवाएं अनुपम और अद्वितीय है। वैसी ही परिस्थितियों में कोई भी अकेला व्यक्ति अपने जीवन मे इतना हासिल नहीं कर सकता था।

—गांधीजी के जन्मदिन पर बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४३)

महात्मा गांधी एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जो जनता के सर्वसम्मत प्रतिनिधि के रूप में खड़े हो सके और उनको एक विजय दूसरी विजय की ओर ले जा सके और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि पिछली दशाब्दी में भारत एक शताब्दी के बराबर आगे बढ़ गया।

—तृतीय भारतीय राजनीतिक सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण (लंदन, १९३३)

महात्मा गांधी ने आजादी के सीधे मार्ग पर हमारे पैर दृढ़ता से जमा दिए हैं। वह और अन्य नेतागण अब जेल के सींखचों के पीछे सड़ रहे हैं। इसलिए महात्मा गांधी द्वारा शुरू किया गया कार्य देश और विदेश में रहने वाले उनके देशवासियों को पूरा करना है।

—गांधीजी के जन्मदिन पर बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४४)

महात्मा गांधी ने भारत और भारत की स्वतंत्रता के लिए जो काम किया वह इतना अनुपम और अद्वितीय है कि उनका नाम हमारे इतिहास में सदा-सदा के लिए स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा।

—सुभाषचन्द्र बोस, पृ० ५७

हमारी पीढ़ी ने राजनीतिक संघर्ष के रूप में महात्मा गांधी का अनुसरण किया है किंतु सभी प्रश्नों पर उनके विचारों को स्वीकार नहीं किया। इसलिए महात्मा गांधी को भारत की वर्तमान पीढ़ी के विचार और चिंतन का प्रतिपादक मानना भूल होगी।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधन (नवम्बर, १६४४)

गांधी और टैगोर

टैगोर और गांधी दोनों ही आधुनिक औद्योगिक सभ्यता के विरुद्ध हैं। परन्तु संस्कृति के क्षेत्र में उनके विचार समान नहीं हैं। जहां तक चिन्तन, कला और संस्कृति का सम्बन्ध है, टैगोर विदेशी प्रभाव को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। उनका विश्वास है कि संस्कृति के क्षेत्र में भारत और शेष विश्व के मध्य पूरा सहयोग होना चाहिए और पारस्परिक आदान-प्रदान भी होना चाहिए। हमें किसी अन्य राष्ट्र की संस्कृति, कला अथवा विचारों का विरोधी नहीं होना चाहिए। संस्कृति के क्षेत्र में जहां टैगोर भारत और शेष विश्व के बीच पूर्ण सहयोग की हिमायत करते है वहां गांधी का सामान्य रवैया विदेशी प्रभाव के प्रति विरोध का है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १६४४)

हमारी पीढ़ी और पिछली पीढ़ी के मध्य एक बड़ी खाई है। पिछली पीढ़ी के विशिष्ट प्रतिनिधि के रूप में मैं टैगोर और गांधी का नाम लेना चाहूंगा। वे पिछली पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनके विचार और चिन्तन में एवं हमारी पीढ़ी के विचार और चिंतन के बीच एक बड़ी खाई है।

अगर आप टैगोर और गांधी की कृतियों का अध्ययन करें तो आप यह पाएंगे कि उनके मस्तिष्क में सदैव यह द्वन्द्व रहा है

कि पश्चिमी प्रभाव के प्रति उनकी क्या प्रतिक्रिया होनी चाहिए। जहां तक महात्मा गांधी का सम्बन्ध है, उन्होंने इस समस्या का कोई स्पष्ट समाधान हमको नहीं दिया। उन्होंने पश्चिमी विचारों को स्वीकार करने के प्रति अपने दृष्टिकोण के बारे में लोगों को सदैव अनिश्चय की अवस्था में रखा।

—टोकियो में विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधन (नवम्बर, १९४४)

गृह उद्योग

प्रत्येक व्यक्ति जानता है अथवा उसे जानना चाहिए कि यूरोप और एशिया के रूप से विकसित देशों यथा जर्मनी और जापान, में भी अनेकानेक गृहउद्योग हैं और जो समृद्ध स्थिति में हैं। तब हमें अपने देश के विषय में भय क्यों होना चाहिए ?

— हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१९-२-१९३८)

चरित्र

दैनिक कार्य करके सन्तुष्ट रहने से ही हमारा काम नही चलेगा। इन सब कार्यो का लक्ष्य है आत्मविश्वास उत्पन्न करना, इस बात को नहीं भूलना चाहिए। काम ही जीवन का परम लक्ष्य नही है। काम करते हुए चरित्र को विकसित करना पड़ेगा और जीवन का सर्वांगीण विकास भी करना होगा। मनुष्य को अपने व्यक्तित्व और प्रकृति के अनुसार वैशिष्ट्य लाभ अवश्य करना पड़ेगा। परन्तु इस वैशिष्ट्य (विशेषज्ञता) से सर्वांगीण विकास भी होना चाहिए। जिस मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति नही हुई है उसे कभी सन्तोष नहीं मिलता। उसे मन में सदैव एक शून्यता या अभाव का बोध होता रहता है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२९)

विद्यार्थी का प्राथमिक कर्त्तव्य है चरित्र-निर्माण। विश्व-विद्यालय की शिक्षा चरित्र-निर्माण में सहायक होती है और हम किसीके भी चरित्र को उसके कार्यों द्वारा आंक सकते हैं। कार्य ही चरित्र को व्यक्त करता है। किताबी जानकारी से मुझे घोर वितृष्णा है। मैं चाहता हूं चरित्र, विवेक, कर्म। चरित्र के अन्तर्गत सब कुछ आ जाता है—भगवान की भक्ति, देशभक्ति, भगवान को पाने की उत्कट आकांक्षा। किताबी जानकारी एक बेकार चीज होती है जिसका कोई महत्त्व नहीं होता, लेकिन कितनी शोचनीय स्थिति है कि अनेक लोग उसीकी डींग हांकते रहते है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

चिन्तन

एक बार जब तुम यह जान जाते हो कि चिंतन की पद्धति क्या है तो फिर कोई भी आशंका नहीं है। हो सकता है कि किसी निष्कर्ष तक पहुंचना फिर भी कठिन लगे, लेकिन वह असम्भव नहीं होगा।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९-९-१९१५)

मनुष्य जैसा चिन्तन करता है वैसा ही स्वयं बन जाता है। जो अपने आपको दुर्बल और पापी समझता है वह क्रमशः दुर्बल और पापी हो जाता है। जो अपने आपको पवित्र और शक्तिशाली मानता है वह पवित्र और शक्तिशाली बन जाता है। मनुष्य की जिस प्रकार की भावना होती है उसी प्रकार की सिद्धि उसे प्राप्त होती है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२९)

चिन्ता

अगर किसीको भगवान में विश्वास है तो चिन्ता और भय उससे दूर रहते हैं। आखिर दुर्भाग्य का सामना होने पर भी कोई कर क्या सकता है ? हमारे पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है कि हम किसीका अपनी इच्छासुसार उपचार कर सकें। फिर हम चिन्ता क्यों करें ?

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

जिस प्रकार आकाश को छूने की आकांक्षा रखने वाले को पथ के पर्वतों और कुंजों की उपेक्षा करनी पड़ती है, उसी प्रकार जो सम्पूर्ण हृदय से सब-कुछ परे हटाकर अपने मनवांछित कार्य को पूरा करना चाहता है, उसे अन्य बातों की कतई चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (३१-८-१९१५)

जनता

भविष्य में भारतीय जनता को दूसरे देशों की सभी प्रकार की प्रगति और विशेषतया युद्ध-कौशल से घनिष्ठ सम्पर्क रखना चाहिए।

—गांधीजी के जन्मदिन पर बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४३)

जनशक्ति

स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे कि भारत की प्रगति केवल किसान, धोबी, चर्मकार और मेहतर द्वारा सम्भव बनेगी। ये शब्द बिल्कुल सत्य हैं। पाश्चात्य संसार ने दिखा दिया है कि जनशक्ति से क्या कुछ उपलब्ध हो सकता है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण है विश्व का प्रथम समाजवादी लोकराज अर्थात् रूस। अगर भारत फिर ऊंचा उठेगा तो जनशक्ति के द्वारा ही।

—मित्र चारुचन्द्र गांगुली को पत्र (कैम्ब्रिज, २३-२-१९२०)

जनसंख्या

स्वतन्त्र भारत में लम्बी अवधि के कार्यक्रमों के सम्बन्धों में प्रथम समस्या, जिससे मुकाबला करना है, हमारी बढ़ती हुई जनसंख्या है। मैं इस सैद्धान्तिक प्रश्न की ओर नहीं जाना चाहता कि भारत में जनसंख्या अधिक है अथवा नहीं। मैं तो मात्र यह संकेत करना चाहता हूं कि जहां गरीबी, भूख, बीमारियां धरती को शिकार बना रही हैं, वहां हम एक दशाब्दी में ३ करोड़ जनसंख्या की वृद्धि को स्वीकार करने में समर्थ नहीं हैं।

—हरिपुरा कांग्रेस में अध्यक्षीय भाषण (१९-२-१९३८)

जिज्ञासा

जिस प्रकार खिले हुए फूल के साथ सुगन्धि अनिवार्य रूप में रहती है, इस सम्बन्ध में कोई प्रश्न नहीं उठा सकता उसी प्रकार जीवन में अन्वेषणकारी प्रश्नों का होना अनिवार्य है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-९-१९१५)

जिन्ना

व्यक्तिगत रूप से मैं मुस्लिम लीग के अध्यक्ष मि० जिन्ना के प्रति आदर रखता हूं। मैं और मेरी पार्टी उनके निकट सम्पर्क में रहे हैं तथा अतीत में लीग के साथ सहयोग भी किया है, और मैंने न तो लीग और न ही उसके यशस्वी नेताओं का कभी विरोध किया है; किन्तु अपनी मातृभूमि के अंगच्छेदन के लिए मैं पाकिस्तान योजना का उग्रतम विरोध करता हूं।

—बर्मा से प्रसारण (१२-९-१९४४)

जीवन

अब मेरा यह विश्वास दृढ़ हो गया है कि जीवन खंडशः नहीं जिया जा सकता, वह सम्पूर्ण ही जिया जा सकता है।

अगर हमने किसी विचार को स्वीकार किया है तो उसके प्रति हमें अपने आपको पूर्णतः समर्पित कर देना होगा, और उसे मौका देना होगा कि वह हमारे समग्र जीवन को रूपान्तरित करे। अगर एक अंधेरे कमरे में प्रकाश की कोई किरण प्रवेश करे तो वह निश्चय ही उसके कोने-कोने को उजागर कर देगी।

—आत्मकथा, अध्याय ३

जीवन का जब एक ढर्रा बंध जाता है तब कभी-कभी वैचित्र्य की आवश्यकता होती है।

—भाभी श्रीमती विभावती बसु को पत्र (१२-२-१९२९)

दरअसल हम मनुष्यों के वेश में ऐसे पशु हैं, जिनमें भावनोचित गुणों का कहीं पता ही नहीं चलता। बल्कि, कहना यह चाहिए कि हम पशुओं से भी गए-बीते हैं क्योंकि हममें बुद्धि और चेतना है, जो पशुओं में नहीं होती। जन्म से ही हमारा पालन-पोषण आराम से और विलासिता के बीच होता है और इसीलिए कठिनाइयों का सामना करने की हमारी क्षमता समाप्त हो जाती है। हम अपनी इच्छाओं के स्वामी नहीं बन पाते। हम जीवन-भर अपनी कामनाओं के दास रहते हैं और जीवन हमारे लिए भार बन जाता है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१९१२-१३)

मुझे जीवन इतना प्रिय नहीं है कि उसके लिए चालाकी का सहारा लूं। मूल्य के सम्बन्ध में मेरी धारणा बाजारू विचारों से भिन्न है। मेरा यह विचार है कि शारीरिक सुख या व्यक्तिगत सफलता की कसौटी पर जीवन की सफलता या असफलता का निर्णय नहीं किया जा सकता। हमारे संघर्ष का उद्देश्य भौतिक शक्ति प्राप्त करना नहीं है। विषय-लाभ करना हमारे जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकता।

—पत्रावली, पृ० २४२

मेरी तो यह धारणा है कि यदि कारागृह में ही सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करना पड़े तब भी मेरा जीवन व्यर्थ नहीं जाएगा, क्योंकि जीवन की सफलता का मापदंड तो हृदय का विकसित होना है, न कि बाह्य सक्रियता।

—श्रीमती वासंतीदेवी को पत्र (२०-१२-२६)

मैं अपने जीवन को एक सोद्देश्य कार्य के रूप में ले रहा हूं। जीवन में सफलता या विफलता देना तो भगवान के हाथ में है।

—श्रीमती वासंतीदेवी को पत्र (२०-१२-१९२६)

जीवन का पुनर्निर्माण

यह पूरी तरह किसी व्यक्ति की मानसिकता पर निर्भर करता है कि उसके संशय का विस्तार किस हद तक होगा और वह किस हद तक अपने आन्तरिक जीवन का पुनर्निर्माण करना चाहेगा जिससे वह यथार्थ को नये सिरे से गढ़ने की ओर बढ़ सके। इस मामले में प्रत्येक पुरुष स्वयं ही अपना नियामक है।

—आत्मकथा, अध्याय ६

जेल

कोई भी शिष्ट और सुशिक्षित व्यक्ति जेल में रहना पसन्द नहीं कर सकता। जेल का वातावरण मनुष्य को विकृत और अमानुषीय बनाने में योग देता है। मेरी तो धारणा है कि यह बात सभी जेलों के लिए कही जा सकती है। बहुत-से अपराधियों की कारावास में नैतिक उन्नति नहीं होती, अपितु उनका और भी अधिक पतन हो जाता है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

जब तक जेल में अच्छी व्यवस्था एवं सामाजिक वातावरण की कमी है तब तक कैदियों का सुधार होना असम्भव है।

और तब तक जेल-जीवन से मानव नैतिकता की ओर अग्रसर न होकर अवनत ही होता जाएगा।

—श्री दिलीपकुमार राय को पत्र (२-५-१९२५)

जेल के कष्ट शारीरिक की अपेक्षा मानसिक अधिक हैं। जहां अत्याचार और अपमान का आघात कम सहन करना पड़ता है वहां वन्दी-जीवन उतना कष्टप्रद नहीं होता। ये सूक्ष्म आघात तो ऊपर से ही होते हैं, जेल के अधिकारियों का इसमें कोई हाथ नहीं होता। मैं तो ऐसा समझता हूं कि ये जो पीड़ाएं है, वे पीड़ा देने वालों के प्रति मनुष्य के मन घृणा से भर देती है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

जेल में रहते-रहते आत्मनिष्ठ एवं वस्तुनिष्ठ सत्य एक हो जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो भाव और स्मृति सत्य में परिणत हो गए हैं। मेरा भी ऐसा ही हाल है। भाव ही इस समय मेरे लिए सत्य है। इसका कारण भी स्पष्ट है—एकत्व बोध में ही शान्ति है।

—श्री अनाथवधु दत्त को पत्र (१९२६)

वास्तव में मैंने जेल में आकर बहुत कुछ सीखा है। जीवन के बहुत से सत्य, जो किसी समय छाया से लगते थे अब स्पष्ट हो गए है। अनेक नई अनुभूतियों ने मेरे जीवन को सबल और गम्भीर बना दिया है। यदि ईश्वर ने कभी मुझे अवसर दिया और जिह्वा को वाणी दी तो ये सब बातें अपने देशवासियों को बताना चाहूंगा।

—श्री अनाथवधु दत्त को पत्र (१९२६)

संसार ईश्वर की कृति है, परन्तु जेलें मानव निर्माण का प्रतीक हैं। उनका अपना एक अलग ही संसार है, जिसके ऊपर

सभ्य समाज के विचारों एवं प्रथाओं का शासन नहीं मिलता। अपनी आत्मा का पतन किए बिना अपने जीवन को एक बन्दी के जीवन के अनुरूप बना लेना कोई सरल कार्य नहीं है। ऐसा करने के लिए एक व्यक्ति को अपनी पुरानी आदतों के परित्याग के साथ-साथ अपने स्वास्थ्य एवं पौरुष का संरक्षण भी करना पड़ता है, हर प्रकार के नियमनों की स्वीकृति के साथ-साथ उत्साह के उत्प्लावन का संरक्षण करना पड़ता है और दासता की अस्वीकृति के साथ-साथ स्थितप्रज्ञता को बनाए रखने में आनन्द अनुभव करना पड़ता है।

—श्री एन० सी० केलकर के नाम पत्र (२८-८-१९२५)

ज्ञान

पूर्ण ज्ञान तभी संभव है जब ज्ञात और ज्ञेय एकाकार हो जाएं। मानसिक स्तर पर जो सामान्य चेतना का स्तर है, ऐसा होना संभव नहीं है। यह अतिमानसिक स्तर पर अथवा चेतना द्वारा ही संभव होता है। लेकिन अतिमानसिकता और चेतना के अतिमानसिक स्तर की हिन्दू-दर्शन की धारणा, उसकी अपनी अनोखी धारणा है, जिसको पाश्चात्य दार्शनिक स्वीकार नहीं करते। हिन्दू-दर्शन के अनुसार पूर्ण ज्ञान की उपलब्धि तभी सम्भव है जब हम यौगिक बोध अर्थात् किसी प्रकार के अंत:-प्रज्ञात्मक बोध द्वारा अतिमानसिक स्तर तक पहुंच सकें।

—आत्मकथा, अध्याय १०

झांसी की रानी

दुर्भाग्य से झांसी की रानी हार गईं। यह उनकी हार नहीं थी, यह भारत की हार थी। उनकी मृत्यु हो गई किन्तु उनकी आत्मा कभी नहीं मर सकती। भारत एक बार फिर झांसी की

रानियों को पैदा करेगा और विजय की ओर प्रयाण करेगा।

—आई० एन० ए० के महिला वर्ग के लिए रानी झांसी प्रशिक्षण शिविर के उद्घाटन पर भाषण (२२-१०-१९४३)

टैगोर

आपका संदेश अमर जवानी का संदेश है। आपने केवल कविता ही नहीं लिखी है और कला का ही सृजन नहीं किया है वरन् आप कविता और कला को जिए भी हैं।

—तारा रोड्स, पृ० २०३

त्याग

अगर चितरंजन दास अपनी वर्तमान अवस्था में सब कुछ त्याग सकते हैं, और जीवन की अनिश्चितताओं का सामना कर सकते हैं तो मुझे विश्वास है कि मेरे जैसा नवयुवक, जिसे परेशान करने वाली कोई भी सांसारिक चिन्ता नहीं है, वैसा कदम उठाने के लिए और भी सक्षम है।

—भाई शरत्चन्द्र बोस को पत्र (१६-२-१९२१)

हम तो मिट्टी के पुतलों के समान हैं। हम भगवान के प्रकाशपुंज के कुछ स्फुलिंग मात्र है। हमें इन विचारों के समक्ष आत्मसमर्पण करना पड़ेगा। देह के सुख-दुःखों का परित्याग करके जो इस प्रकार आत्म-निवेदन कर सकते हैं, जीवन में उनकी सफलता अवश्यम्भावी है।

—पत्रावली, पृ० २४२

त्याग और कष्ट-सहन

त्याग और कष्ट-सहिष्णुता अपने आपमें बहुत आकर्षक चीजें नहीं है। लेकिन मैं उनसे बच नहीं सकता क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि उनके बिना हमारी राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूर्ति हर्गिज नहीं हो सकती। यह केवल एक संयोग है कि इस

काम के लिए मैं आगे जा रहा हूं, न कि कोई और। यदि हम किसी पराये व्यक्ति के त्याग का अनुमोदन करते हैं तो कोई कारण नहीं कि हम अपने ही मामले से उसका अनुमोदन क्यों न करें।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-४-१९२१)

त्यागपत्र

पिताजी को आशंका है कि मैं अपनी जीविका का साधन चौपट कर रहा हूं और मैं भविष्य में अपने लिए अकथनीय कष्टों के बीज बो रहा हूं। मैं नहीं जानता कि मैं उन्हें कैसे समझाऊं कि जिस क्षण मैं त्यागपत्र दूंगा वह मेरे जीवन का एक सर्वाधिक गौरवशाली और आनन्ददायक क्षण होगा।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (६-४-१९२१)

मैं जानता हूं कि त्याग का अर्थ क्या है। इसका अर्थ है गरीबी, कष्ट, कठोर परिश्रम और ऐसी कठिनाइयों को गले लगाना, जिन्हें बताने की आवश्यकता मुझे नहीं है, लेकिन जिसका अनुमान आप भली भांति लगा सकते हैं। लेकिन यह त्याग मुझे जान-बूझकर और सचेत होकर करना ही होगा।

भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (६-४-१९२१)

दयानंद

लगभग उसी समय जबकि बंगाल में रामकृष्ण परमहंस सफलता प्राप्त कर रहे थे, उत्तर पश्चिमी भारत में एक और प्रमुख धार्मिक व्यक्तित्व विकसित हो रहा था। वे आर्यसमाज के संस्थापक दयानंद सरस्वती थे। स्वामी दयानंद सरस्वती के अनुसार लोगों के लिए विशुद्ध आर्यधर्म की ओर लौटना और प्राचीन आर्यों जैसे जीवन को जीना वांछनीय था। उनका विशिष्ट नारा था—वेदों की ओर लौटो। जबकि इस्लाम

सुभाष ने कहा

कुछ सीमा तक पश्चिमी संस्कृति और ईसाई मत से प्रभावित था, आर्यसमाज ने अपनी प्रेरणा-शक्ति देशीय स्रोतों से प्राप्त की।

—दि इंडियन स्ट्रगिल, पृ० २२-२३

दान

आखिरकार जिसने कुछ कमाया है वही तो कुछ देने की स्थिति में होगा।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (३-१०-१९१५)

केवल दान करना संगठित उदारता का लक्ष्य नहीं हो सकता; बदले में कुछ दिए बिना ग्रहण करने से आत्मसम्मान को ठेस पहुंचती है। यह भाव सहायता लेने वाले गरीबों के मन में जाग्रत करना चाहिए।

—श्री हरिचरण बागची के नाम पत्र (३-७-१९२५)

दुःख

जब मैं गम्भीरता से विचार करता हूं तो देखता हूं कि हमारे समस्त दुःखों के भीतर एक महान् उद्देश्य छिपा हुआ है। यदि हम जीवन में हर क्षण इस तथ्य को स्मरण रखें तो दुःख, कष्ट सहन करने में हमें कोई पीड़ा न होगी।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

जो भगवान को प्रिय है उन पर ही निरन्तर दुःख की वर्षा होती है। क्या यह बात एकदम असत्य है? क्या यह बात भी एकदम झूठ है कि मनुष्य का हृदय जितना बड़ा होता है उसका दुःख भी उतना ही बड़ा होता है?

—पत्रावली, पृ० २४७

दुःख सहन करने में एक प्रकार के आनन्द की अनुभूति होती है। यदि ऐसा न होता तो लोग पागल हो जाते; कष्टों के बीच

में रहते हुए भी पूर्ण प्रसन्नता के साथ कैसे हंसते ? जिस वस्तु में बाहर से देखने पर कष्ट दिखाई देते हैं, उसमें भीतर झांकने पर आनन्द का बोध होता है।

—श्री अनाथबंधु दत्त को पत्र (१९२६)

दुःख सहन किए बिना मनुष्य कभी भी हृदय के आदर्श के साथ अभिन्नता अनुभव नहीं कर सकता और परीक्षा में पड़े बिना मनुष्य कभी निश्चित रूप से नही बता सकता कि उसके पास कितनी शक्ति है। इस अभिज्ञता के कारण मैंने अपने आपको और भी अच्छी तरह से पहचान लिया है और अपने ऊपर मेरा विश्वास पहले से सौगुना अधिक बढ़ गया है।

—श्री अनिलचन्द्र विश्वास को पत्र (१९२५)

मैं इतना बलवान या पाखण्डी नही हूं कि सब प्रकार के दुःख प्रसन्नता से सहन कर लूं। कुछ लोग इतने अभागे है कि मानो सब प्रकार के दुःख सहन करने के लिए ही उन्होंने जन्म लिया है। यदि किसीको दु ख का प्याला ही पीना हो तो अपने आपको भूलकर ही पीना अच्छा है। इस प्रकार का आत्म-समर्पण भाग्य के सब आघातों को एकदम व्यर्थ न भी कर सके परन्तु इससे हमारी स्वाभाविक सहनशीलता निश्चित ही बढ़ती है। जहां बर्टेन्ड रसेल ने यह कहा है कि जीवन के सब दुःख ऐसे है जिनसे मनुष्य उबरना चाहता है, वहां उसने पूर्णतः संसारी मनुष्य भाव ही व्यक्त किया है। मेरा अनुमान है कि जो केवल निष्कलंक साधुता का ढोंग करता है वही इस बात का प्रतिवाद करेगा।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (५-६-१९२५)

समृद्ध और अनन्त आनन्द स्रोत में पहुंचने की सम्भावना होने पर क्या तुम छोटे-छोटे दु.खों को सहन करना अस्वीकार कर देते ? मैं तो दुःख या उत्साहहीनता का कोई कारण नहीं

देखता, अपितु मेरी तो धारणा है कि दुःख श्रेष्ठ कर्म और महान् सफलता की प्रेरणा देंगे। तुम्हारा क्या विचार है ? दुःख सहन किए बिना जो उपलब्धि होती है क्या उसका कोई मूल्य है ?

- श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

हम धर्मग्रन्थों में पढ़ते हैं कि दुःख में सुख छिपा है। यह बात शत-प्रतिशत सत्य है। कर्म में यदि मनुष्य को सुख न मिले तो वह कभी भी प्रसन्नचित्त से कष्ट सहन नहीं कर सकता। निश्चित ही जो मनुष्य दूसरों के लिए कष्ट भोगता है उसे उस कष्ट में जितना सुख मिलता है, सम्भवतः उतना सुख उसे अन्यत्र नहीं मिलता। मां बच्चों के लिए, भाई भाई के लिए, बन्धु बन्धु के लिए, देशभक्त देश के लिए जो दुःख भोगता है, उसमें यदि आनन्द न होता तो क्या कोई भी इस कष्ट को सहन कर सकता था ?

—भाभी श्रीमती विभावती बसु को पत्र (१९-१२-१९२५)

देशद्रोह

जब तक देशद्रोह को समय रहते रोका नहीं जाता और उसके लिए सजा नहीं दी जाती तब तक कोई भी देश अपनी स्वतन्त्रता रखने की उम्मीद नहीं कर सकता।

—गांधीजी के जन्मदिन पर बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४३)

देशप्रेम

आज मैं भी एक वर्ष से अपने प्यारे देश से दूर हूं और इस बात का अनुभव कर रहा हूं कि मेरी जन्मभूमि मेरे लिए कितनी प्रिय है। वह मेरे लिए कितनी मधुर और सुन्दर बन गई है। आज सोचता हूं मैं इस समय अपनी जन्मभूमि को जितना प्यार कर रहा हूं सम्भवतः मैंने जीवन में उसे उतना प्यार कभी नहीं किया और यदि उस स्वर्गादपि गरीयसी जन्मभूमि के लिए

कष्ट-सहन करना पड़ता है तो वह मेरे लिए आनन्द का विषय क्यों नहीं होगा ? आज देश से बाहर हूं, देश से दूर हूं, परन्तु मन सदा वहीं रहता है और इसमें मुझे कितना आनन्द अनुभव होता है !

—भाभी श्रीमती विभावती वसु को पत्र (१६-१२-१९२५)

देशबन्धु

देशबन्धु चले गए। सिद्धिदाता के उस वरद पुत्र ने विजय-मुकुट पहनकर ही भारत के विशाल कर्मक्षेत्र से दिव्यलोक की यात्रा की। आज उन्होंने महान् प्यार के द्वारा ही अमरत्व प्राप्त किया है। आज हमारे चारों ओर वाह्य संसार में अंधकार है, और हृदय में शून्यता है। जहां तक दृष्टि जाती है वहां तक अन्धकार ही अन्धकार है। अन्धकार की प्राचीर में आलोक-किरण के प्रवेश के लिए तिलभर भी स्थान नहीं है।

—श्रीमती वासंतीदेवी को पत्र (६-७-१९२५)

देश-विभाजन का विरोध

हमने संयुक्त और स्वतन्त्र भारत के निर्माण का प्रस्ताव किया है। इसलिए उसके विभाजन और उसे टुकड़ों में काटने के सभी प्रयत्नों का विरोध करेंगे।—हम अनुभव करते हैं कि देश का विभाजन उसे आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से नष्ट कर देगा।

—वर्मा से प्रसारण (१२-९-१९४४)

देशसेवा

जब मैं आपसे अपील कर रहा हूं कि आप मुझे त्यागपत्र देने (आई०सी०एस० से) की अनुमति दें तो मैं आपका अनुग्रह अपने लाभ के लिए नहीं बल्कि अपने अभागे देश के लिए चाहता

हूं, जिसको पूर्णतः समर्पित जनों की बहुत अधिक आवश्यकता है। आपको यह मानकर चलना होगा कि मेरे लिए जो पैसा खर्च किया गया है वह मातृभूमि के चरणों में अर्पित किया गया है और उससे किसी प्रतिफल की आशा नहीं करनी चाहिए।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-२-१६२१)

धन

मुझे धन से वितृष्णा है क्योंकि धन ही सभी बुराइयों की जड़ है।

— माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१६१२-१३)

हम व्यर्थ में धन के पीछे भागते हैं और नहीं जानते कि वास्तव में सच्चा धन क्या है। इस ससार में केवल वही व्यक्ति वास्तव में धनी है जिसमें भगवान के लिए प्रेम और भक्ति जैसे बहुमूल्य गुण हैं। उसकी तुलना में बड़े-बड़े सम्राट् भी भिखारियों के समान हैं। यह सचमुच आश्चर्य की बात है कि ऐसे बहुमूल्य कोष को खोने के बाद भी हम जीवित बचे हुए हैं।

— माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१६१२-१३)

धनिकों से

जबकि भारतीय राष्ट्रीय सेना विजय-प्रयाण अथवा स्वतन्त्रता के मार्ग में अपने रक्त की अंतिम बूंद तक बहाने के लिए प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है, धनी व्यक्ति मुझसे पूछ रहे हैं क्या पूर्ण सैन्य-सज्जा का अभिप्राय उनकी सम्पत्ति के १० या ५ प्रतिशत से है। मैं ऐसे व्यक्तियों से, जो प्रतिशत की बात कह रहे हैं, पूछूंगा कि क्या हम अपने सैनिकों से लड़ने और अपने रक्त का मात्र १० प्रतिशत तथा शेष बचाए रखने के लिए कह सकते हैं।

—धनिकों से (२६-१०-१६४३)

धर्म

ईश्वर, आत्मा और धर्म सम्बन्धी धारणाओं का अन्तिम सत्य जो भी हो, विशुद्ध व्यावहारिक दृष्टि से मै कह सकता हूं कि धर्म में आरम्भ से ही अपनी रुचि तथा योगाभ्यास से मुझे वहुत लाभ हुआ। मैंने जीवन को गम्भीरता से लेना सीखा। अपने कॉलेज जीवन की दहलीज पर खड़े होकर मुझे अनुभव हुआ कि जीवन का कोई अर्थ और उद्देश्य है। उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शरीर और मन का नियमित शिक्षण आवश्यक है।

—आत्मकथा, अध्याय ६

धर्मान्धता

धर्मान्धता सांस्कृतिक आत्मीयता के मार्ग में सबसे बड़ा कांटा है और धर्मांधता को दूर करने के लिए निरपेक्ष एवं वैज्ञानिक शिक्षा से अधिक उपयुक्त और कोई उपाय नही है। इस प्रकार की शिक्षा एक अन्य प्रकार से भी उपयोगी है, इससे आर्थिक चेतना के विकास में सहायता मिलती है। आर्थिक चेतना का प्रभात धर्मांधता के अन्धकार का विनाशक है।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना के अध्यक्षीय पद से भाषण,
(३ मई, १९२८)

धैर्य

हमें अधीर नहीं होना चाहिए और यह आशा नहीं करनी चाहिए कि जिस प्रश्न का उत्तर खोजने में कितने ही लोगों ने अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया, उसका उत्तर हमें एक-दो दिन में मिल जाएगा।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-९-१९१५)

ध्वजे

हम अनुभव करते है कि हम अपने स्वतन्त्रता-ध्वज को एक दिन के लिए भी झुकाने को तैयार नहीं है।

—कलकत्ता अधिवेशन मे भाषण (दिसम्बर, १९२८)

नवयुवक

आज के नवयुवक कल के नेता और राष्ट्र होंगे। वह विचार, जिसका युवकों द्वारा समर्थन और अभिनन्दन किया जाएगा, एक दिन समूचे राष्ट्र द्वारा समर्थित होगा। किन्तु वह विचार जो युवकों का समर्थन प्राप्त नहीं करता, स्वाभाविक मौत मर जाएगा।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर १९४४)

हमारे पास पवित्र और कठोर सिद्धान्तों वाले श्रेष्ठ नवयुवकों का एक दल होना चाहिए। हमारे देशवासियों की आंखें खुलनी चाहिए।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (८-१२-१९१५)

नारी

जब तक भारतीय नारियां नही जागेंगी, भारत नही जाग सकता।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२-३-१९२०)

मुझे विश्वास हो गया है कि जिस देश में इतने ऊंचे आदर्शों वाली महिलाएं है वह प्रगति करके रहेगा। मेरा विश्वास है कि जो भारतीय महिलाएं इस देश मे आती हैं उनमें देशभक्ति की गहरी भावना हिलोरें लेने लगती है, क्योंकि मां का हृदय बहुत संवेदनशील और गम्भीर होता है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (कैम्ब्रिज २-३-१९२०)

निर्भय

मैं जीवन की अनिश्चितताओं से कतई घबराता नहीं हूं। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि मैं जानबूझकर आर्थिक हानि और शारीरिक असुविधा को गले लगा रहा हूं। लेकिन मैं अपने कार्य के कष्टदायक परिणामों को सहने के लिए—चाहे वे तात्कालिक हों या दीर्घकालीन—तैयार हूं।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (कैम्ब्रिज २३-२-१९२१)

नेता

एक ऐसे राष्ट्र में जो दास रहा हो या मानसिक दासता से पीड़ित हो नेतागण एक बार कुर्सी पर आरूढ़ हो जाने के बाद अपनी इच्छा से विलग होना नहीं चाहते। उनको नीचे खींचना पड़ता है और यह सचमुच एक कष्टदायी कार्य है। इस प्रकार के देश में लोग अन्य देशों की अपेक्षा, अन्ध वीरपूजा में अधिक प्रवृत्त होते हैं और इससे विमुख होने में उन्हें अधिक समय लगता है।

—क्रास रोड्स, पृ० २५३

राष्ट्र किसी नेता की पुरानी सेवाओं के प्रति कृतज्ञ तो रहता है और उन सेवाओं के लिए उससे प्रेम भी करता है, तथापि राष्ट्र उसका अनुसरण केवल तभी तक करेगा, जब तक वह समय के साथ-साथ चले और देशवासियों का पथ-प्रदर्शन करे। हर परिस्थिति में पूर्व बलिदान और कष्ट भविष्य के नेतृत्व का अधिकारपत्र कभी नहीं बन सकते।

—क्रास रोड्स, पृ० २५३

नेता और सिद्धान्त

अपने नेताओं का आदर, प्यार, उनकी श्लाघा और आराधना एक बात है किन्तु सिद्धान्तों का आदर भिन्न बात है।

—कलकत्ता अधिवेशन में भाषण (दिसम्बर, १९२८)

नेतृत्व

हमारे यहां ऐसी परम्परा है कि जिसको एक बार नेतृत्व देते हैं उसके ऊपर इतना बोझ डाल देते हैं, और उससे इतनी आशाएं करते हैं कि किसी भी मनुष्य के लिए इतना भार ढोना या आशाएं पूर्ण करना सम्भव नहीं होता। राजनीति का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व हम नेता को सौंपकर स्वयं निश्चिन्त बैठे रहना चाहते हैं।

—श्री शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय को पत्र (माण्डले १२-८-१९२५)

नैतिकता

वस्तुतः यदि कोई नैतिकता की राह पर चलना चाहता है तो यह हो ही नहीं सकता कि वह किसी राजनैतिक संकट में न पड़े। आज व्यक्ति को अपने जीवन के छोटे से दायरे में ही जातिगत अनुभवों से होकर गुजरना होता है।

—आत्मकथा, अध्याय ३

न्याय

जगत के मूल में न्याय की प्रतिष्ठा है। उसे हमें मानना ही पड़ेगा। मैं इसीलिए यह विश्वास करता हूं कि हमारा भी एक दिन आएगा जब हम वर्तमान अभावों का प्रतिशोध गिन-गिन कर लेंगे। इस विश्वास के कारण ही हम वास्तविकता के भार से नहीं दबे, न दबाए ही जा सकेंगे।

—श्रीमती वासंतीदेवी को पत्र (२६-४-१९२६)

परख

चीजों की हमारी परख हमारे अपने विचारों और किसी व्यक्ति के बारे में हमारे आकलन पर निर्भर है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

पराधीन देश

वास्तव में पराधीन देश का सबसे बड़ा अभिशाप यही है कि स्वतंत्रता-संग्राम में विदेशियों की अपेक्षा देशवासियों से ही लड़ना पड़ता है।

—श्री शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय को पत्र (माडले, १२-८-१९२५)

परिवर्तन

हमें युग की मांग के अनुसार अपने आपको ढालना और कार्य करना है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-९ १९१५)

परीक्षा

हम परीक्षाओं के निकट आते ही बेचैन होने लगते हैं, लेकिन हम यह कभी नहीं सोचते कि हमारे जीवन का प्रत्येक क्षण परीक्षा का क्षण है। हमारा परीक्षक हमारा प्रभु है। हमारा धर्म है। शैक्षणिक परीक्षाएं न कोई ज्यादा महत्त्व की हैं, और न स्थायी मूल्य की। लेकिन जीवन की परीक्षाएं अनन्तकाल के लिए हैं उनके नतीजे हमें इस जीवन में भुगतने होते हैं और आने वाले जन्मों में भी।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

पर्यटन

यदि किसीको नितान्त वैयक्तिक जीवन को बिताना है तो उसके लिए परिव्राजक के जीवन से बढ़कर और कोई जीवन नहीं है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

पहाड़

पहाड़ पर शारीरिक श्रम बहुत बढ जाता है। हृदय को पावन करने वाली शांति मिलती है। पर्वतों के शांतिपूर्ण एकांत-

वास में जीवन स्वप्नवत् लगता है। पर्वतों के निकट फैलता हुआ कुहासे का आवरण किसी सुंदर कविता के स्वप्निल आवरण के समान प्रतीत होता है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२१-१०-१९१५)

पागलपन

यदि मनुष्य में पागलपन का तनिक भी अंश न हो तो भला कैसे काम चल सकता है? क्या पूर्णतः स्थिर मस्तिष्क होना उचित है?

—पत्रावली, पृ० २५६

पिता

उनका दृष्टिकोण और सहानुभूति का दायरा बहुत व्यापक था, जिसका अदृश्य प्रभाव पूरे परिवार पर पड़ता था। मैंने उन्हें उड़ीसा के निवासियों के लिए अथवा किसी भी अन्य प्रान्त के लोगों के लिए एक भी अपशब्द कहते हुए कभी नहीं सुना। वे यद्यपि अपनी भावना की अभिव्यक्ति में मितभाषी और अलगाव वाली वृत्ति के थे लेकिन वे जहां कहीं भी होते और किसी के भी सम्पर्क में आते, उसीके प्रिय पात्र बन जाते थे।

—आत्मकथा, अध्याय ५

पूर्ण लामबन्दी

यदि हम बिना बलिदान और कष्टों के आजादी प्राप्त करते है तो यह निष्प्रयोजन होगी, क्योंकि हम उस आजादी को संभालकर रखने में समर्थ नहीं होंगे जो इतनी आसानी से प्राप्त की गई है। इसलिए हम अपनी आजादी को केवल कष्ट उठाकर प्राप्त करेंगे। मुझे दृढ़ विश्वास है कि हम पूर्ण लामबन्दी द्वारा ही अपनी मातृभूमि को यथेष्ट सहायता दे सकते हैं।

—सिंगापुर मे महिलाओं के समक्ष भाषण (१२-७-४३)

पूर्ण स्वराज्य

अपने देश में राष्ट्रीय आंदोलन के प्रभात से ही हमने स्वतंत्रता की व्याख्या पूर्ण स्वराज्य के रूप में की है। उपनिवेशीय राज्य के रूप में हमने इसका अर्थ कभी नहीं लगाया। हमने स्वतंत्रता को पूर्ण स्वराज्य के रूप में ही समझा है। उपनिवेशीय राज्य की बातें हमारे देशवासियों को तनिक-सा भी प्रभावित नहीं कर सकतीं, यहां तक कि तरुण पीढ़ी को भी नहीं, जो कि अभी विकसित हो रही है। हमको याद रखना चाहिए कि यह तरुण पीढ़ी ही भविष्य की उत्तराधिकारी है।

—कलकत्ता अधिवेशन में भाषण (दिसम्बर, १९२८)

प्रकृति

अगर किसीकी आत्मा को सांत्वना देने और दुर्बल क्षणों में प्रेरणा का बल प्रदान करने के लिए प्रकृति न हो तो मैं सोचता हूं कि मनुष्य जीवन में प्रसन्नता का अनुभव नहीं कर सकता। जब तक प्रकृति हमारी सहचरी न हो और हमारा मार्गदर्शन न करे, तब तक जीवन किसी मरुस्थल में निष्कासन का शाप भोगने वाला बन जाता है, उसकी ताजगी समाप्त हो जाती है, वह निष्क्रिय बन जाता है और जीवन का शुक्ल पक्ष धुंधलाने लगता है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (कटक ११-१०-१९३०)

प्राकृतिक सौंदर्य के साथ अपने हृदय को एकाकार करना, मन को संयत करके प्रकृति की भाषा समझने का प्रयास करना कष्टसाध्य अवश्य है, परन्तु सामान्य रूप से यदि कोई यह कर सके तो उसका हृदय आनन्द से ओतप्रोत हो जाएगा।

—श्रीमती विभावती बसु के नाम पत्र ([illegible]

प्रगति

जीवन में प्रगति का आशय यह है कि शंका-संदेह उठते रहने और उनके समाधान के प्रयास का क्रम चलता रहे।

—आत्मकथा, अध्याय ६

जीवन शाश्वत निर्माण और संहार के जरिये प्रगति करता है। आज तुम जिस चीज का निर्माण करते हो, कल उसका संहार करो और किसी अन्य चीज का निर्माण आरम्भ करो और फिर उसे भी मिटा दो। और यों यह क्रम लगातार चलता रहे।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-६-१६१५)

प्रभाव

जीवन के आरम्भिक वर्षों में जो छाप हम पर पड़ती है, वह अधिक समय तक टिकती है, वह अच्छी हो या बुरी, और विकासशील बच्चे के मन पर उसका गहरा असर होता है।

—आत्मकथा, अध्याय ५

प्रभु महिमा

अगर कोई प्रभु की महिमा के गीत नहीं गा सकता तो उसका जन्म व्यर्थ है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१६१२-१३)

प्राथमिक शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा में इन्द्रिय शक्ति पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है। इसका कारण यह है कि उस समय चिन्तन-शक्ति और स्मरण-शक्ति भली भांति जागती है। अतः जिस विषय के सम्बन्ध में भी बताया जाए—जैसे गौ, घोड़ा, फल, फूल तो इन पदार्थों को नेत्रों के सामने रखे बिना सिखाना कठिन होगा।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१६२६)

प्रार्थना

हम भगवान की कृपा को गहन रूप में इसलिए नहीं महसूस कर पाते कि हम अज्ञानी हैं, अविश्वासी हैं और पक्के नास्तिक है। हम तभी प्रभु के लिए प्रार्थी होते हैं जब हम कष्ट में होते हैं। और, तभी शायद कुछ हद तक सच्चाई से उसे याद करते हैं। लेकिन जैसे ही हमारा कष्ट दूर हो जाता है और हम बेहतर महसूस करने लगते हैं, वैसे ही हम प्रार्थना बन्द कर देते हैं और भूल जाते हैं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

प्रेम

जिसने तुम्हारा लालन-पालन किया है, उसके प्रति तुम्हें स्नेह हो ही जाता है—लेकिन इसमें कोई बड़ी बड़ाई की बात नही। परन्तु जो व्यक्ति राह चलते किसी व्यक्ति को अपने हृदय से सर्वोच्च स्थान दे सकता है, अनुमान करो कि उसका हृदय कितना विशाल होगा और उसका प्रेम कितना महान्!

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

मुझे अपने चारों ओर प्रेम की दिव्य लीला का प्रसार दिखाई देता है; मैं अपने अंतःकरण में भी इसी वृत्ति को पाता हूं कि मुझे अपने आपको पूर्ण करने के लिए प्रेम से ओत-प्रोत होना होगा और अपने जीवन का पुनर्निर्माण करने के लिए भी प्रेम को ही अपने जीवन का बुनियादी सिद्धांत बनाना होगा। इन सब विचारों का सपुंजन मुझे इसी एक निष्कर्ष की ओर प्रेरित करता है।

—आत्मकथा, अध्याय १०

फासिस्ट

भारतीय परिप्रेक्ष्य में फासिस्ट शब्द का, यदि इस शब्द को एक वैज्ञानिक और तकनीकी अर्थ में प्रयोग किया जाए, सही

अर्थ समझना कठिन है। फिर भी यदि 'फासिस्ट' से उन लोगों की ओर इंगित होता हो, जो अपने को 'हिलटर', 'सुपर हिटलर' अथवा 'पनपते हुए हिलटर' कहते है, तो यह कहा जा सकता है कि मानवता के ये नमूने दक्षिणपंथी शिविर में मिलते हैं।

—क्राग रोड्स, पृ० २०५

राष्ट्रीय समाजवाद (फासिज्म) राष्ट्रीय एकता और संगठन को सृजित करने और जनता की दशा को सुधारने में समर्थ रहा है। परन्तु यह विद्यमान आर्थिक व्यवस्था को जिसका निर्माण पूंजीवादी व्यवस्था पर हुआ था, पूरी तरह सुधारने में समर्थ नहीं हो पाया है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधन (नवम्बर, १९४४)

फूट डालो नीति

फूट डालो और राज्य करो की नीति, यद्यपि इसके सुस्पष्ट लाभ है, शासक शक्ति के लिए किसी प्रकार शुद्ध वरदान नहीं है। वस्तुत. यह नीति नई समस्याओं और नई उलझनों को जन्म देती है।

—हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१९-२-१९३८)

बंगाल

आज बगाल में सर्वत्र केवल अधिकारों के लिए छीना-झपटी चल रही है। जिसके पास क्षमता है वह उस क्षमता की सुरक्षा के लिए चिंतित है और जिसके पास क्षमता नही है वह क्षमता छीन लेने के लिए प्रयत्नशील है। दोनों पक्षों का कहना है कि देशोद्धार हो तो हमारे ही द्वारा हो, नहीं तो उसकी आवश्यकता ही नहीं है। इन क्षमता-लोलुप राजनीतिज्ञों के झगड़े और

विवाद को छोड़कर और मौन रहकर आत्मोत्सर्ग कर सकें क्या ऐसे कार्यकर्त्ता आज बंगाल में नहीं हैं ?

—श्री भूपेन्द्रनाथ बंद्योपाध्याय को पत्र (१९२९)

बंगाल के शस्य श्यामल खेत, मधुगन्धवाही मुकुलित आम्र-निकुंज, मन्द-मन्द धूप वाली सन्ध्या की आरती, गांव-गांव के कुटीर प्रांगण की शोभा—यह सब दृश्य कल्पना में भी कितने सुन्दर हैं !

—श्री अनाथबंधु दत्त को पत्र (१९२६)

बंगाली

बंगालियों में इंद्रिय-सुख की कामना बहुत गहरी समाई हुई है। और यही कारण है कि वे कुशाग्र बुद्धि होते हुए भी इतने कमजोर हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (८-१२-१९१५)

यह देखकर मुझे गहरा दु:ख होता है कि आजकल पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से बहुत से बंगाली नास्तिक बनते जा रहे हैं और अपने ही धर्म को ठुकरा रहे हैं। मुझे तब गहरा आघात लगता है जब मैं देखता हूं कि आज के बंगाली शान-शौकत की जिन्दगी की ओर बिना सोचे-विचारे ही बढ़ रहे है और चरित्र-हीन होते जा रहे है। यह कितनी दयनीय स्थिति है कि आज-कल के बंगालियों ने अपनी ही राष्ट्रीय वेश-भूषा को तिरस्कार की दृष्टि से देखना सीख लिया है। मुझे इस बात से गहरी व्यथा होती है कि आज के बंगालियों में बहुत कम ऐसे लोग हैं, जिन्हें सुदृढ़, स्वस्थ और ओजस्वी व्यक्ति कहा जा सके।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

बंधन

आप अपनी आत्मा के आधे भाग को स्वतंत्र और आधे को बंधन में नहीं रख सकते। क्या कभी एक कमरे में दीपक जला-

कैर यह संभव है कि उसके एक भाग में प्रकाश हो और शेष में अंधकार रहे। आप राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना करते समय लोकतंत्रात्मक समाज की स्थापना का विरोध नहीं कर सकते।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना में अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

बड़ा परिवार

एक बड़े परिवार का सदस्य होना कई मायनों में एक बाधा है। इससे बच्चों को अक्सर आवश्यक व्यक्तिगत सार-संभाल नहीं मिल पाती इसके अलावा शिशु मानो एक भीड़ में खो जाता है। जिससे उसके व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता। लेकिन साथ ही वह सामाजिकता को विकसित करता है और आत्मकेन्द्रित भावना तथा अटपटेपन पर विजयी होता है।

—आत्मकथा, अध्याय १

बर्मा

बर्मा में जातिभेद न होने के कारण यहां कला-सम्बन्धी चर्चा किसी श्रेणी विशेष की सीमा मे बद्ध नहीं है। इसका परिणाम यह हुआ कि बर्मा की कला चारों ओर फैल गई है। सम्भवतः इस कारण से तथा लोकसगीत और लोकनृत्य के प्रचलन से ब्रह्मदेश में भारतवर्ष की अपेक्षा जनसाधारण में सौन्दर्य-बोध की मात्रा अधिक है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

लोकसंगीत और नृत्य के सम्बन्ध में बर्मा एक अनोखा देश है। यहां शुद्ध देशी नृत्य और गान पुरातन काल से ही चले आ रहे हैं। उनसे वहां सुदूर देहातों के लाखों लोगो का मनोरंजन हो रहा है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

बर्मास्थित भारतीय

जब भारतीय-स्वातंत्र्य के अंतिम युद्ध का इतिहास लिखा जाएगा तो उस इतिहास में बर्मा स्थित भारतीयों का सम्मान-जनक स्थान होगा।

—बर्मा से प्रस्थान (२४-५-१९४५)

बर्मास्थित भारतीयों से

मुझे कोई संदेह नहीं है कि आप भारतीय स्वतंत्रता के रक्षक, राष्ट्रीय सम्मान को बनाए रखने में हर वस्तु, यहां तक कि जीवन का भी बलिदान कर देंगे ताकि आपके साथी, जो अन्यत्र लड़ाई जारी रखेंगे स्वयं को प्रेरित करने के लिए हर समय आपके उज्ज्वल उदाहरण को अपने सामने रख सकें।

—बर्मा से प्रस्थान (२४-५-१९४५)

यदि आपको अस्थायी रूप से झुकना पड़े तो वीरों की तरह झुको, आदर और अनुशासन के उच्चादर्श को कायम रखते हुए झुको। भारत की भावी पीढ़ियां जो तुम्हारे महान् बलिदान के कारण गुलाम के रूप में जन्मेंगी, तुम्हारी कृतज्ञ होंगी और संसार के समक्ष अभिमानपूर्वक घोषणा करेंगी कि आप, उनके पूर्वज, लड़े और मणिपुर आसाम एवं बर्मा में लड़ाई हार गए किन्तु अस्थायी असफलता के द्वारा आपने अंतिम सफलता और गौरव का मार्ग तैयार किया।

—बर्मा से प्रस्थान (२५-४-१९४५)

बलिदान

अपने प्रयत्न, कष्ट-सहन और बलिदान का हम एक ही प्रति-फल चाहते हैं—अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता। भारत आजाद होने पर हममें से बहुत से लोग तो राजनीति से संन्यास ले लेना पसन्द करेंगे। —गांधीजी को संदेश (६ जुलाई, १९४४)

इस भावना से बड़ी सांत्वना और क्या हो सकती है कि कोई सिद्धांत के लिए जिया और मर गया। एक आदमी को इस गान से बड़ा सन्तोष और क्या हो सकता है कि उसकी प्राणशक्ति उसके अधूरे कार्य को आगे बढ़ाने के लिए उस जैसी आत्मशक्तियों को उत्पन्न करेगी। एक आत्मा को इस निश्चितता से बड़े किस पुरस्कार की कामना हो सकती है कि उसका सन्देश पहाड़ों और घाटियों में, उसके देश के विस्तृत मैदानों में कोने-कोने तक और सागर पार दूरस्थ देशों तक तरंगित होगा। अपने देश की वेदी पर शान्तिपूर्ण आत्मोत्सर्ग से बढ़कर जीवन की ससिद्धि और क्या हो सकती है ?

—क्रास रोड्स, पृ० ३८०

प्रत्येक भारतीय को जानना चाहिए कि अंग्रेजों की जीत का तात्पर्य है भारत का विनाश। समय और परिस्थितियां हमारे पक्ष में हैं। हम स्वतंत्रता प्राप्त कर सकते हैं यदि हम लड़ने और बलिदान करने के लिए तैयार हों—समय आ गया है जबकि स्वदेश और विदेश में रहने वाले भारतीय एक नेता के नेतृत्व में हथियार लेकर इकट्ठे हों और ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के विनाश के लिए आदेशों की प्रतीक्षा करें।

—भारत स्वतन्त्रता संघ का अधिवेशन (सिंगापुर, ४-७-४३)

भले ही कोई तात्कालिक और मूर्त लाभ न हो, तथापि कोई भी वेदना और बलिदान कभी निस्सार नहीं जाता। मात्र बलिदान और कष्ट के द्वारा ही कोई उद्देश्य सफल और प्रतिफलित हो सकता है और युग तथा स्थान में यही शाश्वत नियम लागू होता है कि शहीद के खून से ही धर्म अंकुरित होता है।

—क्रास रोड्स, पृ० ३८०

मुझे पूर्ण विश्वास है कि (निस्वार्थ वलिदान) की भावना कभी नहीं कुचली जा सकती। भारत की स्वतंत्रता के लिए मैं उस भावना को वनाए रखने की प्रार्थना करता हूं। मैं आपसे सिर ऊंचा उठाए रखने और उस आनन्ददायक (सौभाग्यशाली) दिन की प्रतीक्षा करने की प्रार्थना करता हूं जवकि एक वार फिर आपको भारत की स्वतंत्रता के लिए युद्ध ठानने का अवसर प्राप्त होगा।

—वर्मा से प्रस्थान (२४-५-१९४५)

मैं निश्चयात्मक ढंग से कह सकता हूं कि प्रत्येक भारतीय पुरुष और स्त्री, लड़के और लड़की के लिए आगे आने और भारत की मुक्ति के लिए महान् वलिदान करने का समय आ चुका है।

—भारतीय स्वतंत्रता लीग, सिंगापुर की महिलाओं को संवोधन (१२-७-१९४३)

वेदना और वलिदानों से कोई व्यक्ति कभी हानि में नहीं रहता। यदि कोई व्यक्ति किसी पार्थिव पदार्थ को खोता भी है तो वह वदले में अमर जीवन का उत्तराधिकारी होकर [illegible] अधिक प्राप्त कर लेगा।

—[illegible]

बहिर्मुखी

अगर किसीको इस संसार में [illegible] उसे अपने खोल से वाहर आना होगा।

—मित्र हेमन्तकुमार [illegible]

संस्थाओं पर कब्जा करने की हिमायत करूं तो मैं सरकारी संस्थाओं पर कब्जा करना चाहूंगा। अगर हमें बहिष्कार करना है तो फिर पूरी तरह से क्यों न करें और क्यों नहीं अपनी सारी शक्ति और ध्यान उसमें केन्द्रित करें ?

— कांग्रेस के लाहौर के अधिवेशन मे भाषण (दिसम्बर, १९२२६)

बाबू बेनीमाधवदास

उनके मुखमंडल पर एक ऐसी भावाभिव्यक्ति थी, जिसे मैं केशवचन्द्र सेन के चित्रों में पाता था और यह आश्चर्यजनक नही था, क्योंकि वे केशवचन्द्र के कट्टर भक्त और शिष्य थे।

-आत्मकथा, अध्याय ५

बाबू संस्कृति

वर्तमान युग में भगवान ने कुछ ऐसी नयी चीज उत्पन्न की है जो पिछले युगों में नही थी। यह नई सृष्टि है बाबू की। हम सब बाबुओं की जमात में शामिल हैं। भगवान ने हमें एक जोड़ी पांव दिए हैं, लेकिन हम चालीस-पैंतालीस मील पैदल नही चल सकते है, क्योंकि हम बाबू हैं। हमें एक जोड़ी मजबूत हाथ मिले है, लेकिन हम हाथों से काम नही लेना चाहते क्योंकि हम बाबू है। भगवान ने हमें अच्छा-खासा शरीर दिया है, लेकिन सोचते है कि शारीरिक श्रम केवल निम्न जातियों को ही शोभा देता है क्योंकि हम बाबू वर्ग के है। हर तरह के काम के लिए हम नौकर की चीख-पुकार मचाते है और स्वयं हाथ-पांव नही हिला सकते क्योंकि आखिर हम बाबूजी हैं। हालांकि हमारा जन्म एक गरीब देश में हुआ है, लेकिन हम गरीबी नहीं सह सकते क्योंकि हम बाबू है, इसलिए सर्दी से हम इतने भय-भीत रहते हैं कि अपने आपको ढकने के लिए हम मोटे-से-मोटे

लिहाफ तैयार कराते हैं। हर जगह हम बाबू के रूप में बन-ठन कर निकलते हैं, क्योंकि आखिर हम बाबू ही तो हैं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

बाल-शिक्षा

वर्तमान समय में भारत में जो लोग बाल-शिक्षा की समस्या का समाधान करना चाहते हैं, उन्हें यह देखना होगा कि वे कौनसे प्रतिकूल तत्त्व हैं जो आज बच्चे की मानसिकता को प्रभावित कर रहे हैं। साथ ही यह भी देखना आवश्यक होगा कि वे कौनसी लोरियां है, जिन्हें गाकर आज माताएं, मामियां, काकियां या नर्सें बच्चों को सुलाती हैं अथवा वे कौनसे उपाय है, जिनसे किसी अनिच्छुक शिशु को राजी करके खाना खिलाया जाता है। अक्सर बच्चा इन दोनों मामलों में डर के कारण ही कुछ करता है। बंगाल में एक सबसे अधिक लोकप्रिय लोरी में आधी रात के बाद वर्गी या पिंडारी लुटेरों के गिरोह का भयावह वर्णन किया जाता है। निसन्देह यह किसी अधनींदे बच्चे को सुलाने का बहुत प्रिय तरीका नहीं है।

—आत्मकथा, अध्याय ५

विलायत

कोई चाहे या न चाहे, इस देश का मौसम लोगों को फुर्तीला बना देता है। यहां लोगों को काम में व्यस्त देखना बहुत अच्छा लगता है। प्रत्येक व्यक्ति समय के मूल्य के प्रति सचेत है और जो कुछ होता रहता है उसके पीछे एक योजना होती है। मेरे लिए प्रसन्नता की इससे अधिक और कोई बात नहीं हो सकती कि गोरे लोग मेरी सेवा में लगे हुए हों और उन्हें मैं अपने जूतों पर पालिश करते हुए देखूं। यहां विद्यार्थियों की एक हैसियत है और उनके प्रति प्रोफेसरों का व्यवहार हमारे यहां से भिन्न

हैं। यहां हम देख सकते है कि आदमी को आदमी से कैसे व्यवहार करना चाहिए। इनमें बहुत से दोष हैं लेकिन बहुत से मामलों में उनके गुणों के कारण हमें उनका आदर करना पड़ता है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१२-११-१९१९)

ब्रिटिश दमन

भारत ब्रिटिश साम्राज्य का हीरा है और उस हीरे को बचाए रखने के लिए ब्रिटिश जनता अंत तक लड़ेगी। इसलिए भारतीय जनता, विशेषकर उसके नेताओं को ऐसी सभी उम्मीदों को तिलांजलि दे देनी चाहिए कि अंग्रेज उनकी मांगें मान लेंगे। उन्हें तो उस समय तक संघर्ष करते रहना होगा कि जब तक आखिरी अंग्रेज भारत से निकाल न दिया जाए। हमारे आंदोलन के आखिरी दिनों में बहुत-से कष्ट झेलने पड़ेंगे और कत्लेआम का सामना करना पड़ेगा। लेकिन वह जो आजादी की कीमत होती है जो हमें चुकानी होगी। यह स्वाभाविक ही है कि ब्रिटिश सिंह अपने आखिरी दिनों में खूखार बनकर काटे, फाड़े लेकिन वह तो मर रहे शेर की हरकत है, जिसे हम झेल लेंगे।

—आजाद हिन्द रेडियो जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

ब्रिटिश साम्राज्य

आत्मिक अध:पतन, सांस्कृतिक अपकर्ष, दारुण गरीबी और राजनीतिक दासता ही मात्र वे चीजें हैं, जिन्हें भारत ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद से प्राप्त किया है। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि भारतीय जनता ब्रिटिश जंजीरों को तोड़ने और स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक बार फिर साहस के साथ उठ खड़ी हुई है।

—जापान पहुचने पर समाचारपत्रों को वक्तव्य (१९-६-१९४३)

यहां ऐसे व्यक्ति हैं, जो एक समय सोचते थे कि वह साम्राज्य, जिसमें सूर्य नहीं डूबता था, चिरंतन साम्राज्य है। ऐसे किसी विचार ने मुझे कभी नही कंपाया। इतिहास ने मुझे सिखाया है कि प्रत्येक साम्राज्य का अपरिहार्य ह्रास और पतन होता है। अधिक क्या, मैं अपनी आंखों से देख चुका हूं कि नगर और किले जो कभी सुरक्षित प्राचीर थे विगत साम्राज्यों की कब्रें बन गए। ब्रिटिश साम्राज्य की कब्र पर खड़ा हुआ एक बच्चा भी विश्वास कर सकता है कि शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य अतीत की वस्तु बन चुका है।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१९४३)

यद्यपि एक वृद्ध पुरुष का जीवन कुशल चिकित्सकों और गुणकारी औषधियों एवं इंजेक्शनों की सहायता से बढ़ाया जा सकता है, लेकिन उसके लाभकारी ओज को वापस नहीं लाया जा सकता। ब्रिटिश शासन अमेरिकन बैशाखियों पर आगे बढ़ने का प्रयास कर रहा है किन्तु ये अमेरिकन बैशाखियां ब्रिटेन की लम्बे समय तक सहायता नहीं कर सकतीं।

—बैंकाक मे भाषण (२१-५-१९४५)

संसार में चाहे जो कुछ घटित हो, अंग्रेज भारत पर साम्राज्यवादी आधिपत्य की नीति में परिवर्तन नहीं करेंगे। ब्रिटिश साम्राज्य झुकेगा नही चाहे समाप्त हो जाए। इसलिए किसी भारतीय को स्वप्न में भी यह सोचने की जरूरत नहीं है कि ब्रिटेन एक-न-एक दिन भारत की स्वतंत्रता को मान्यता देगा।

—टोकियो से प्रसारण, (२३-६-१९४३)

ब्रिटिश साम्राज्यवाद

अगर अहिंसक गुरिल्ला युद्ध काफी लम्बे अरसे तक चलता रहे तो आजादी निश्चित रूप से आएगी, क्योंकि विभिन्न मोर्चों

पर हुई हार के संकलित परिणामस्वरूप ब्रिटिश साम्राज्यवाद अंततः छिन्न-भिन्न हुए बिना नहीं रह सकता। एक क्षण के लिए भी यह मत भूलिए कि ब्रिटिश साम्राज्य अपने अंतिम दौर में है।

—आजाद हिन्द रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

मैं जानता हूं, हममें से कुछ सोच रहे होंगे कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद अमर है और इसका अंत नहीं हो सकता। किंतु मैं जानता हूं कि इतिहास की मर्जी कुछ और ही है। इतिहास ने हमें सिखाया है कि प्रत्येक साम्राज्य उसी प्रकार गिरेगा, जिस प्रकार उसका उदय हुआ है। इसी तरह संसार से ब्रिटिश साम्राज्य के निष्क्रमण का समय आ चुका है।

—सिंगापुर में महिलाओं के समक्ष भाषण (१२-७-१९४३)

हमारी नीति आजादी के लिए लड़ते रहने की होनी चाहिए, चाहे उसका परिणाम कुछ भी क्यों न निकले। युद्ध में सभी क्षेत्रों पर हो रही विनाशकारी हार के कारण ब्रिटिश साम्राज्य जल्द ही ढहकर टूट जाएगा और आखिर में जब साम्राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो जाएंगे तो सत्ता स्वतः ही जनता के हाथ लगेगी। लेकिन अंतिम जीत हमें अपने प्रयत्नों के फलस्वरूप ही मिलेगी। इसलिए यदि भारत में हमें क्षणिक धक्का लगे तो उससे चिन्तित नहीं हो जाना चाहिए। विशेषकर तब जब हमें मशीनगनों, बमों, टैंकों और हवाई जहाजों का सामना करना पड़े। इस बीच चाहे जितनी बाधाएं आएं अथवा आघात लगें, हमारा कर्तव्य है कि हम उस समय तक राष्ट्रीय संग्राम जारी रखें जब तक कि मुक्ति की घड़ी न आ जाए।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

भक्ति और प्रेम

भक्ति और प्रेम से मनुष्य नि स्वार्थी बन जाता है। मनुष्य के मन में जब किसी व्यक्ति के प्रति श्रद्धा बढ़ती है तब उसी अनुपात में स्वार्थपरता घट जाती है। मनुष्य प्रयास करने पर प्रेम और भक्ति को बढ़ा सकता है और उसके फलस्वरूप स्वार्थ-परता भी घटा सकता है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१६२६)

भगतसिंह

भगतसिंह विद्रोह की भावना के प्रतीक थे, जिसने देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक अधिकार कर लिया था। यह भावना अजेय है, और इस भावना द्वारा उत्तेजित ज्योति कभी समाप्त नही होगी। स्वतंत्र होने की आशा करने से पूर्व भारत को अपने कितने ही पुत्रों को खोना पड़ सकता है।

—आल इंडिया नौजवान भारत सभा, कराची मे अध्यक्षीय भाषण (२७-३-१६३१)

भगवान

जहां मनुष्य सामर्थ्यहीन होता है वहां वह इच्छा से हो या अनिच्छा से, भगवान की शरण लेता है।

श्रीमती वासन्तीदेवी के नाम पत्र (१०-७-१६२५)

भजन

शान्ति तो तभी मिल सकती है जब हम भगवान के ध्यान में डूबे और भगवान की पूजा करें। अगर इस धरती पर किसी भी प्रकार से शांति आनी है तो वह इसी तरह आएगी कि प्रत्येक घर में भगवान का भजन-कीर्तन गूंजे।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

भविष्य

जितना भी हम आकाश की ओर दृष्टि डालेंगे, उतना ही हम उस सबको भूलेंगे जो अतीत में कटुतापूर्ण था। हमारे सामने भविष्य अपनी सम्पूर्ण गरिमा के साथ उद्घाटित होगा।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

भाग्य

नागरिक जीवन में भी भाग्य शूरों का साथ देता है।

—आत्मकथा, अध्याय १

भारत

आज भारत संसार के सबसे अधिक गरीब देशों में से है। किन्तु हमारे ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत आने से पूर्व भारत गरीब नहीं था।

वस्तुतः भारत की सम्पदा ने ही यूरोपियन देशों को भारत की ओर आकर्षित किया। यह कोई नहीं कह सकता कि राष्ट्रीय सम्पदा अथवा साधनों की दृष्टि से भारत गरीब है। प्राकृतिक साधनों से हम धनी हैं किन्तु ब्रिटिश और विदेशी शोषण के कारण, हमारा देश निर्धन होता रहा।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधन (नवम्बर, १९४४)

इंगलैण्ड ने पिछले महायुद्ध को भारत की सहायता से जीता था किंतु उसका पुरस्कार उसे अधिक दमन तथा जन-संहार के रूप में मिला। भारत उन घटनाओं को भूला नहीं है और वह इस बात का प्रयत्न करेगा कि वर्तमान स्वर्णिम अवसर उसके हाथ से न निकल जाए।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१९४२)

इतने लम्बे समय तक ब्रिटिश आधिपत्य में रहने के बाद भारतीयों के लिए इंगलैण्ड के साथ अपने संबंधों में हीन भावना

से मुक्त होना कठिन हो सकता है। जब तक हम ब्रिटिश सत्ता का अविभाज्य अंग बने रहेंगे, तब तक अंग्रेजों के शोपण का प्रतिशोध कठिन होगा।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना मे अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

जो जाने अथवा अनजाने ब्रिटिश प्रचार से प्रभावित हुए हैं, उनका यह विचार है कि भारत को अंग्रेजों ने बड़ी सुगमता से जीत लिया था और यह दोनों धारणाएं पूरी तरह से भ्रामक है और आधारहीन हैं।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सबोधन (नवम्बर, १९४४)

पिछले ३००० वर्षों में बाहर से लोग नये विचारों, कभी-कभी नई संस्कृतियों के साथ भारत में आए हैं। ये सभी प्रभाव, विचारधाराएं एवं संस्कृतियां धीरे-धीरे भारत के राष्ट्रीय जीवन में घुल-मिल गई, जिससे कि इस तथ्य के बावजूद कि मूल रूप से हमारी वही संस्कृति और सभ्यता है, जैसी कई हजार वर्ष पूर्व थी, हम बदले है और समय के साथ आगे बढ़े हैं। आज अपनी प्राचीन पृष्ठभूमि के बावजूद हम आधुनिक संसार में रहने के योग्य हैं और हमने अपने को उस संसार के अनुकूल ढाल लिया है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सबोधन (नवम्बर, १९४४)

भारत जब तक ब्रिटिश शासन में रहेगा, भारतीयों के लिए इंगलैण्ड के साथ अपने संबंधों में हीनभावना से मुक्त होना कठिन होगा। जब तक हम ब्रिटिश सत्ता का हिस्सा बने रहेंगे, तब तक उसके शोपण को रोकना भी कठिन होगा।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना में अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

मैं पूर्ण स्वतन्त्र गणराज्य के पक्ष में सदैव अचल रहूंगा। यह मेरा अन्तिम लक्ष्य है। भारत अपनी नियति को प्राप्त करेगा और उपनिवेशीय शासन से संतुष्ट नहीं रह सकेगा। हम ब्रिटिश

सत्ता में क्यों रहें ? भारत अपने मानवीय और भौतिक साधनों से सम्पन्न है। भारत की किशोरावस्था समाप्त हो चुकी है।··· वह अब केवल अपना पालन ही नहीं कर सकता वरन् एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में कार्य कर सकता है।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना मे अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

यदि आप आधुनिक भारत को समझना चाहते है तो आपको तीन महत्त्वपूर्ण तत्त्वों को ध्यान में रखना होगा। प्रथम तत्त्व है—प्राचीन पृष्ठभूमि अर्थात् भारत की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति, जिसके प्रति आज भारतीय जनता सचेत है और जिसके ऊपर उसे गर्व है। दूसरा तत्त्व है—वह संघर्ष जो उस समय से जब से हम अंग्रेजों द्वारा पूर्ण रूप से विजित हुए, बिना किसी व्यवधान और क्रमभंग के चल रहा है और तीसरे तत्त्व में वे कुछ प्रभाव निहित हैं, जो भारत में बाहर से आए हैं।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १९४४)

संसार में ऐसी कोई ताकत नहीं जो भारत को दासता में रख सके।

—आदेश (१७-८-१९४५)

हमने अपना धर्म खो दिया है और वस्तुतः सब खो दिया है—अपना राष्ट्रीय जीवन भी। अब हम एक दुबले, गुलाम, धर्मविहीन और शापग्रस्त राष्ट्र बनकर रह गए हैं। हे भगवान ! भारत क्या था और आज पतन के किस गर्त में पहुंच गया है ! क्या तुम अब भी आकर इसका उद्धार नहीं करोगे ! यह तुम्हारी ही भूमि है। लेकिन देखो प्रभु ! आज उसकी दशा कैसी है ? कहां है वह सनातन धर्म, जिसकी स्थापना तुम्हारे वरद पुत्रों ने की थी ? वह धर्म और यह राष्ट्र, जिसकी स्थापना और जिसका निर्माण हमारे पूर्वज आर्यों ने किया था, आज

भारत नहीं छोड़ता। अगर मुझे उम्मीद होती कि वर्तमान युद्ध जैसा आजादी पाने का दूसरा अवसर—दूसरा सुनहरा अवसर—हमें इसी जीवन में मिल जाएगा तो मैं शायद ही देश से बाहर कदम रखता।

—आजाद हिन्द रेडियो से प्रसारण (९-७-१९४४)

भारत छोड़ने का मेरा उद्देश्य था देश में चल रहे संघर्ष की बाहर से सहायता करना। बाहर की इस अनुपूरक सहायता के बिना किसी भी व्यक्ति के लिए भारत को स्वाधीन करना असम्भव है। दूसरी ओर बाहर से अनुपूरक सहायता, जिसकी देश के राष्ट्रीय संघर्ष में अति आवश्यकता है, वस्तुतः बहुत कम है।··· सहायता जो हमारे देशवासी चाहते थे और अब भी चाहते है, दो प्रकार की है—नैतिक और भौतिक। सर्वप्रथम उन्हें नैतिक रूप से विश्वास दिलाया जाना आवश्यक है कि अन्ततः उनकी विजय सुनिश्चित है। दूसरे, उन्हें बाहर से सैनिक सहायता दी जानी चाहिए। प्रथम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध-स्थिति का निरपेक्ष अध्ययन करना होगा और इस प्रकार यह पता लगाना होगा कि युद्ध का परिणाम क्या होगा? दूसरे उद्देश्य के लिए यह खोजना होगा कि भारत से बाहर रहने वाले भारतीय स्वदेश में रहने वाले अपने देशवासियों की सहायता के लिए क्या कर सकते हैं? और यह भी कि यदि आवश्यकता पड़ जाए तो क्या ब्रिटिश साम्राज्यवाद के शत्रुओं से सहायता प्राप्त करना सम्भव हो पाएगा? मित्रो, मैं अब यह बताने की स्थिति में हूं कि ये दोनों लक्ष्य पूरे हो चुके है।

—सिंगापुर मे आम सभा (९-७-१९४३)

भारत भूमि

भारत भूमि भगवान की बहुत प्यारी है। प्रत्येक युग में उन्होंने इस महान् भूमि पर त्राता के रूप में जन्म लिया है,

जिससे जन-जन को प्रकाश मिल सके, धरती पाप के बोझ से मुक्त हो और प्रत्येक भारतीय के हृदय में सत्य और धर्म प्रतिष्ठित हो सके। भगवान अनेक देशों में मनुष्य के रूप में अवतरित हुए हैं, लेकिन किसी अन्य देश में उन्होंने इतनी बार अवतार नहीं लिया जितनी बार भारत में लिया है। इसलिए मैं कहता हूं कि यह भारत हमारी माता, भगवान की प्रिय भूमि है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

भारतीय

कोई कब तक हाथ पर हाथ रखे अपने देश और धर्म की इस दुर्दशा को देखता रहेगा ? अब और प्रतिक्षा नहीं की जा सकती। अब और सोने का समय नही है। हमको अपनी जड़ता से जागना ही होगा, आलस्य त्यागना ही होगा और कर्म में जुट जाना होगा। लेकिन कैसा दुर्भाग्य है कि भारत माता की बहुत कम ऐसी सतानें हैं जो आज के स्वार्थपूर्ण युग में अपने निजी हितों का पूरी तरह से त्याग कर सकें और मा की सेवा के लिए समर्पित हो सकें।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१९१२-१३)

क्या इस समय भारत माता का एक भी सपूत नहीं है जो स्वार्थरहित हो ? क्या हमारी मातृभूमि इतनी अभागी है ? कैसा था हमारा स्वर्णिम अतीत और कैसा है यह वर्तमान ! वे आर्य वीर आज कहां हैं, जो भारत माता की सेवा के लिए अपना बहुमूल्य जीवन प्रसन्नता से न्यौछावर कर देते थे ?

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

ब्रिटिश भारत के पूरे इतिहास में एक भी भारतीय ने देश-भक्ति की भावना से प्रेरित होकर सिविल सर्विस का त्याग स्वेच्छा से नहीं किया। जब प्रशासनिक सेवाओं के सदस्य अपनी

निष्ठा वापस ले लेंगे या कम से कम जब वे ऐसा जाहिर करेंगे तभी नौकरशाही का ढांचा चरमराकर ढह सकेगा।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (६-४-१९२१)

भारतीय स्वभाव से ही आतिथ्यप्रिय है।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१९४२)

यदि विदेशी शासन के अन्तर्गत और उन समस्त रुकावटों और बाधाओं के होते हुए भी जो विदेशी शासन का परिणाम हैं, हम अपनी सृजनात्मक प्रतिभा का इतना प्रमाण दे सकें तो यह बात समझी जा सकती है कि जब भारत आजाद हो जाएगा और भारत की जनता को जब शैक्षणिक सुविधाएं प्राप्त हो जाएंगी तो वह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी बौद्धिक क्षमता और सृजनात्मक प्रतिभा का भी अच्छा प्रमाण देने में समर्थ होगी।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर १९४४)

हम भारतीय हैं, इसलिए भारत का कल्याण हमारा अपना कल्याण होगा।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१९१२-१३)

भारतीय राष्ट्रवाद

सांस्कृतिक अन्तर्राष्ट्रीयता की दृष्टि से कभी-कभी राष्ट्रीयता पर प्रहार किया जाता है कि वह स्वार्थी और आक्रामक है। इसे सांस्कृतिक क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में बाधक समझा जाता है। इस विषय में मेरा कहना है कि भारतीय राष्ट्रवाद न तो संकुचित है, न स्वार्थी और न आक्रामक। यह मानवजाति के उच्चादर्शों—सत्यं, शिवं, सुंदरम्—से प्रेरणा ग्रहण करता है। भारतीय राष्ट्रवाद सत्यता, ईमानदारी, मानवता और सेवा एव त्याग की भावना की शिक्षा देता है।

—महाराष्ट्र प्रान्तीय कान्फ्रेंस पूना में अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

मैं उन लोगों में से नहीं हूं जो आधुनिकता के जोश में अपने अतीत के गौरव को भूल जाते हैं। हमें भूतकाल को अपना आधार बनाना है। भारत की अपनी संस्कृति है, जिसे उसे अपनी सुनिश्चित धाराओं में विकसित करते जाना है। हमारे पास विश्व को देने के लिए दर्शन, साहित्य, कला और विज्ञान में बहुत कुछ नया है और उसकी ओर सारा संसार टकटकी लगाए हुए है। एक शब्द में कहूं तो हमें नये-पुराने का मेल करना है। हमारे कुछ अच्छे विचारक और कार्यकर्ता इस महत्त्व-पूर्ण कार्य में पहले से ही लगे हुए हैं। हमें एक ओर पुनः वेदों पर जाने वाली प्रवृत्ति और दूसरी ओर आधुनिक यूरोप के फैशन और अर्थहीन परिवर्तन के लिए नकल करने वाली प्रवृत्ति का मुकाबला करना है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता में भाषण (२५-१२-१६२८)

भाव और चिंतन

अगर तुम भावनाओं के वेग में बह जाते हो तो तुम तर्क-शक्ति एवं विश्लेषण और संश्लेषण की शक्ति खो देते हो। कारण यह है कि इन गुणों का समुचित उपयोग हम तभी कर सकते है जब हम शांत भाव मे हों।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-६-१६१५)

हमें भावनाओं के झंझावात में भी शांत रहना होगा तभी और केवल तभी हम अपने जीवन का निर्माण रचनात्मक आधार पर कर सकेंगे। हमें अपनी भावनाओं पर नियन्त्रण रखना होगा और गहराई से मनन करना होगा। भावना के बिना चिन्तन असम्भव है। परन्तु यदि हमारे पास केवल भावना की पूंजी है तो चिन्तन कभी भी फलदायक नही हो सकता। बहुत

से लोग भावुक होते हैं लेकिन वे कुछ सोचना नहीं चाहते और कुछ लोगों को तो यही नहीं मालूम कि चिन्तन करना कैसे चाहिए।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-६-१६१५)

भाषा

जहां तक सामान्य भाषा का संबंध है, मैं यह सोचने को बाध्य हूं कि हिन्दी और उर्दू के मध्य किया जाने वाला अंतर कृत्रिम है। सबसे अधिक स्वाभाविक बोलचाल की भाषा इन दोनों के मिश्रण से बनेगी, जैसी कि भारत के अधिकांश भाग में प्रतिदिन बोली जाती है और यह सामान्य भाषा नागरी अथवा उर्दू किसी भी लिपि में लिखी जा सकती है।

—हरिपुरा कांग्रेस में अध्यक्षीय भाषण (१६-२-१६३८)

भाषा असमर्थ है क्योंकि वह विचारों को आधा-अधूरा ही प्रकट कर पाती है। मेरी कामना है कि मनुष्य उसे और पूर्ण बना सके क्योंकि अभी वह बेचारी इतनी लंगड़ी है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (१-१०-१६१२)

मजदूर संगठन

जब तक हम मजदूरों, किसानों और दलित वर्गों को उनकी तकलीफों के आधार पर संगठित नहीं करते तब तक सविनय अवज्ञा कभी नहीं आ सकती।

—कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में भाषण (दिसम्बर १६२६)

मत

यह विचित्र बात है कि हमारे अपने बारे में राय, इस बात से किस प्रकार प्रभावित हो सकती है कि दूसरे हमारे विषय में क्या सोचते हैं।

—आत्मकथा, अध्याय ५

चढ़ती हुई नम्र और बढ़ते हुए अनुभव के साथ हमारा मन भी अधिक स्थिर होता जाता है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९१७)

मन की उन्नति की भी कोई सीमा नहीं होती, मनुष्य जितनी ऊंचाई पर पहुंचता है, उससे और भी अधिक ऊंचे पहुंचने की इच्छा बनी रहती है। परिणाम यह होता है कि संघर्ष बराबर चलता ही रहता है।

—पत्रावली, पृ० २५६

मानव मन द्वारा, जिसकी अनेक सीमाएं है, ब्रह्म का सम्पूर्ण ज्ञान हो पाना असम्भव है। इस यथार्थ का वह वस्तुतः या अपने आप में जैसा है—बोध नहीं कर सकता।

—आत्मकथा, अध्याय १०

यह एक बड़ी दिलचस्प बात है कि मानव मन के सामने जब ऐसी सांसारिक कठिनाइयां आती हैं, जिन पर वह विजय नहीं पा सकता तो वह तुरन्त किसी आध्यात्मिक शक्ति का सहारा खोजने लगता है।

—आत्मकथा, अध्याय ६

महापुरुष

मेरी धारणा है कि महापुरुषों का महत्व बड़ी-बड़ी घटनाओं की अपेक्षा छोटी-छोटी घटनाओं से अधिक उजागर होता है।

—श्री शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय को पत्र (१२-५-१९१५)

महिलाएं

उन लोगों से, जो कहते हैं कि हमारी महिलाओं के लिए बन्दूकें उठाना उचित नहीं होगा, मेरी यह प्रार्थना है कि वे हमारे इतिहास के पृष्ठों को देखें। १८५७ के प्रथम स्वातंत्र्य-युद्ध में झांसी की रानी ने कितने वीरता के कार्य निष्पादित किए। उसी

प्रकार रानी झांसी के समान अनेक वीर महिलाओं की हमारी स्वतंत्रता के अंतिम युद्ध में भी आवश्यकता होगी। यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि आप कितनी बंदूकें उठा सकती हैं अथवा कितने कारतूस छोड़ सकती हैं। महत्त्वपूर्ण वह आत्मशक्ति है, जो आपके वीरतापूर्ण उदाहरणों से उद्भूत होगी।

—भारतीय स्वतंत्रता लीग, सिंगापुर की महिलाओं को सम्बोधन (१२-७-१९४३)

मैं भारतीय नारी की सामर्थ्य से भली-भांति परिचित हूं। इसलिए मैं निश्चित रूप से कह सकता हूं कि ऐसा कोई कार्य नहीं है, जिसे हमारी नारियां नहीं कर सकती हों और कोई बलिदान अथवा कष्ट ऐसा नहीं है, जिसे वे सहन न कर सकें।

—सिंगापुर में महिलाओं के समक्ष भाषण (१२-७-४३)

मैं वीर भारतीय नारियों की ऐसी टुकड़ी चाहता हूं जो मृत्यु से जूझने वाली रेजीमेंट बनाए और जो उस तलवार को उठाए जो कि १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम में झांसी की वीर रानी ने उठाई थी।

—सिंगापुर में आम सभा (९-७-१९४३)

यह अत्युक्ति नहीं होगी, यदि मैं यह कहूं कि हमारे राष्ट्रीय प्रयास का कोई विभाग अथवा कोई सार्वजनिक क्रिया कलाप ऐसा नहीं है, जिसमें महिलाएं भाग नहीं ले रही है। अपने राष्ट्रीय आन्दोलन के पिछले कई वर्षों में महिलाएं प्रसन्नता और साहस से कष्टों को सहन करने में पुरुषों के समकक्ष रही है। भारतीय महिलाएं गांव-गांव जाने में, बिना भोजन और पानी के एक सभा के बाद दूसरी सभा को सम्बोधित करने में, घर-घर में स्वतंत्रता का संदेश पहुंचाने में, चुनाव अभियान संचालित करने में, सरकारी निषेधों के बावजूद जुलूस निकालने में, निर्दयी ब्रिटिश पुलिस द्वारा लाठी प्रहार सहन करने में और

जेल-जीवन, कष्टों, यंत्रणाओं, अवमाननाओं के कष्ट सहन करने में किसीसे पीछे नहीं रही।

—सिंगापुर मे महिलाओं के समक्ष भाषण (१२-७-४३)

हमारा अतीत महान् और उज्ज्वल रहा है। यदि भारत की उज्जवल परंपरा न होती तो भारत झांसी की रानी जैसी वीर महिला को जन्म नहीं दे सकता था। इसी प्रकार जैसे कि प्राचीनकाल में हमारे पास मैत्रेयी जैसे व्यक्तित्व रहे हैं, उसी प्रकार हमारे सामने महाराष्ट्र की अहिल्यावाई, वगाल की रानी भवानी और रजिया बेगम तथा नूरजहां के प्रेरक उदाहरण हैं, जो भारत में ब्रिटिशराज्य से पूर्व अर्वाचीन ऐतिहासिक समय में दीप्तिमान प्रशासिकाएं थी। मैं भारत की मिट्टी की उर्वरता में हर प्रकार का विश्वास रखता हूं। मुझे विश्वास है कि भारत अतीत की तरह, नारीत्व के सर्वोत्तम पुरुषों को जन्म देगा।

—आई० एन० ए० के महिला वर्ग के लिए रानी झांसी प्रशिक्षण शिविर के उद्घाटन पर भाषण (२२-१०-१९४३)

हमारी वीर बहिनों ने गुप्त क्रांतिकारी गति-विधियों में सक्रिय भाग लिया। कई बार उन्होंने प्रदर्शित किया है कि आवश्यकता पड़ने पर वे भी अपने भाइयों के समान ही आग्नेय-शास्त्रों का प्रयोग कर सकती हैं।

—सिंगापुर मे महिलाओं के समक्ष भाषण (१२-७-१९४३)

महिलाओं से

आप कहेंगी कि हिन्दू महिला का स्थान परिवार के भीतर, पर्दे के पीछे है, जन-मंच पर नही है। मैं मां को कर्त्तव्य के सम्बन्ध में उपदेश देने की धृष्टता नहीं करता। परन्तु आज हमारा देश और समाज सामान्य स्थिति में नहीं है। आज हमारे

घर-घर में आग फैल रही है। जब घर में आग लगती है तब तो पर्दे में रहने वालों को भी साहस के साथ मार्ग में आकर खड़ा होना पड़ता है। सन्तान को बचाने तथा बहुमूल्य सामान की आग से रक्षा करने के लिए उनको भी पुरुष-पराक्रम के साथ परिश्रम करना पड़ता है। क्या इससे उनकी मर्यादा या सम्मान की हानि होती है?

—पत्रावली, पृ० २४६

मां का प्यार

मैंने इस जीवन में जिस प्यार को चखा है, मैं अपने भीतर प्यार का जो सागर उमड़ता हुआ पाता हूं, उसकी तुलना में माता का प्यार गोखुर के समान है। इस आत्मकेन्द्रित विश्व में मनुष्य को एक मात्र शरण मां के प्यार में मिलती है और इसलिए उसे इतना बढ़ा-चढ़ाकर कहा जाता है। जिसने तुम्हारा लालन-पालन किया है, उसके प्रति तुम्हें स्नेह हो ही जाता है, लेकिन इसमें कोई बड़ी बड़ाई की बात नहीं। परन्तु जो व्यक्ति राह चलते किसी व्यक्ति को अपने हृदय मे सर्वोच्च स्थान दे सकता है, अनुमान करो कि उसका हृदय कितना विशाल होगा और उसका प्रेम कितना महान्!

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

लोगों की सामान्यतः यह धारणा होती है कि मां का प्यार सबसे गहरा और निस्वार्थ होता है और उसकी माप नहीं हो सकती।—क्या मां का प्यार सचमुच स्वार्थरहित होता है? मुझे नही मालूम, फिर भी जब तक कोई माता सड़क पर डोलते किसी भी बच्चे को अपने ही पुत्र के समान माने, तब तक उसके प्यार को स्वार्थरहित नहीं कहा जा सकता। उसकी

आसक्ति इस तथ्य के कारण है कि उसने अपने बच्चे को स्वयं पाला-पोसा है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

मांडले जेल

एक कवि का कथन है कि मृत्यु का कोई मौसम नहीं होता—मेरे विचार से मांडले में भी धूल का कोई मौसम नहीं है, क्योंकि संसार के इस कोने में वर्षा ऋतु का तो कभी आगमन होता ही नहीं। मांडले में तो हर स्थान पर धूल-ही-धूल है। यहां तक कि वायु में धूल है, अतः सांस के साथ भी धूल फांकनी होती है। भोजन में धूल है, अतः भोजन के साथ उसे खाना होता है। आपकी मेज पर, कुर्सी और बिस्तर पर धूल है, अतः आपको उसका कोमल स्पर्श करना ही पड़ता है। यहां धूल की आंधियां आती हैं—और दूर-दूर तक के वृक्षों और पहाड़ियों को ढक देती हैं। उस समय आप इसके पूर्ण सौन्दर्य के दर्शन कर सकते है। वास्तव में मांडले में तो धूल सर्वव्यापक है क्योंकि यह हर स्थान पर है। इस दृष्टि से हम इसे दूसरा परमेश्वर कह सकते हैं।

—भाई शरच्चन्द्र बसु को पत्र (१४-३-१९२५)

यह तो हम सबको विदित ही है कि लोकमान्य ६ वर्ष तक कारागार में रहे, परन्तु मेरी यह पक्की धारणा है कि कदाचित् ही हममें से कोई यह जानता है कि उन्होंने इस अवधि में कैसी-कैसी शारीरिक और मानसिक यातनाएं भोगीं। मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास है कि वे यहां अकेले रहे। यहां उनका कोई बुद्धिजीवी साथी भी न था। केवल इतना ही नहीं, वल्कि वे अन्य बन्दियों से मिल-जुल भी नहीं सकते थे। सान्त्वना के लिए केवल पुस्तकों का ही उन्हें एकमात्र सहारा था, अन्यथा उनका

आपको उपयोगी बना सके तो अविलम्ब समस्त जाति में नवीन जीवन दृष्टिगोचर होने लगेगा।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (६-१०-१९२५)

मानवता

यदि मनुष्य का जन्म लेकर मैं मानवीय अस्तित्व के उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकू, यदि मैं उसकी नियति को चरितार्थ नहीं कर सकूं तो उसकी सार्थकता ही क्या है? जैसे सभी नदियां अंत में समुद्र में जा मिलती हैं, उसी प्रकार सभी मानवों के जीवन की अंतिम परिणति भगवान में होती है। अगर हमें ईश्वर के दर्शन नहीं होते तो हमारा जीवन व्यर्थ है—सभी कर्मकांड, उपासनाएं और ध्यानादि व्यर्थ है, केवल पाखंड है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१९१२-१३)

मानव निर्माण

राष्ट्रनिर्माण की ओर पहला कदम है सही मानव का निर्माण और दूसरा संगठन। विवेकानन्द और अन्यों ने मानव निर्माण के लिए प्रयत्न किया। जबकि देशबन्धु राजनीतिक संगठन बनाने के लिए प्रयत्नशील रहे और उन्होंने एक संगठन बनाया जिसने ब्रिटिश लोगों की भी श्लाघा प्राप्त की।

—रगपुर राजनैतिक सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण (३०-३-१९२९)

मानसिक प्रशिक्षण

मानसिक प्रशिक्षण के अभाव में शिक्षा के मूल में ही त्रुटि रह जाती है। अपने हाथों से कोई वस्तु बनाने में जिस प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है उस प्रकार का आनन्द संसार में बहुत ही कम मिल पाता है। सृष्टि आनन्द से परिपूर्ण है। सृजन के इस आनन्द को बच्चे थोड़ी उम्र में ही महसूस करने लगते है। जबकि वे कोई भी वस्तु बनाते हैं चाहे वह बगीचे में बीज

बोकर पौधे उगाना हो, या अपने हाथों से पुतला बनाना हो, किसी भी वस्तु की नई सृष्टि करके बच्चे स्वर्गीय आनन्द प्राप्त करते हैं। जिन उपायों से छात्र इस आनन्द का किशोर वय में ही उपभोग कर सकें, उनका प्रबन्ध अवश्य होना चाहिए।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२६)

मायावाद

मायावाद का सिद्धान्त व्यावहारिक नहीं है। उससे मेरे जीवन की संगति नहीं बैठती। यद्यपि मैंने बहुत समय तक और अपने पर बहुत जोर डालकर प्रयत्न किया कि मैं अपने जीवन को उसके अनुकूल बना लूं। इसलिए मैं उसे छोड़ रहा हूं। दूसरी ओर यदि संसार सत्य है (निस्सदेह, निरपेक्ष नहीं, बल्कि सापेक्ष्य रूप में) तो जीवन रुचिकर हो जाता है और सार्थक तथा सोद्देश्य बनता है।

—आत्मकथा, अध्याय १०

मुस्लिम युवकों से

मैं भारत के लाखों मुस्लिम नौजवानों से पूछता हूं कि क्या तुम अपनी मातृभूमि के अंगच्छेदन में सहायक होगे? विभाजित भारत में आपका क्या स्थान होगा? इसलिए मेरे मित्रो, यदि आप स्वतंत्रता चाहते हैं तो आप इसके लिए संघर्ष करें और ब्रिटिश सत्ता को ठोकर मारकर बाहर कर दें। ब्रिटेन के साथ कोई समझौता नहीं होना चाहिए। हमारी पवित्र मातृभूमि के टुकड़े नहीं होंगे।

—बर्मा से प्रसारण (१२-९-१९४४)

मुस्लिम लीग

इस शताब्दी के प्रारम्भ से ही ब्रिटिश सरकार कांग्रेस के विरुद्ध अन्य संस्थाओं का उपयोग करती रही है ताकि वह उसकी

मांगों को अस्वीकार कर सके। इसके उद्देश्य के लिए वह मुस्लिम लीग का उपयोग करती रही है क्योंकि उसका दृष्टिकोण अंग्रेजों के अनुकूल माना जाता है। वस्तुत:, ब्रिटिश प्रचार ने यह प्रभाव उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है कि मुस्लिम लीग भी कांग्रेस जैसी प्रभावशाली संस्था है और यह भारतीय मुसलमानों के बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है। लेकिन यह सच्चाई से बहुत परे है। वास्तव में, यहां कतिपय ऐसे प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण मुस्लिम संगठन हैं जो पूरी तरह राष्ट्रवादी हैं।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१६४२)

मेरा लक्ष्य

अब मुझे पक्का विश्वास हो गया है कि अगर मैं नौकरशाही का एक सदस्य न होकर सामान्य व्यक्ति बना रहूं तो मैं अपने देश की सेवा अधिक अच्छी तरह कर सकता हूं। मैं इस बात से इन्कार नहीं करता कि 'सर्विस' में रहते हुए भी कोई व्यक्ति कुछ हद तक अच्छे काम कर सकता है लेकिन नौकरशाही की जंजीरों से मुक्त होकर वह जितनी भलाई कर सकता है उतनी बंधनग्रस्त होकर कदापि नहीं कर सकता।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-२-१६२१)

एक विदेशी नौकरशाही की सेवा करने के सिद्धान्त से मैं समझौता नहीं कर सकता। इसके अलावा, सार्वजनिक सेवा के लिए अपने आपको तैयार करने की दिशा में पहला कदम है अपने सभी सांसारिक हितों का परित्याग और उस क्षेत्र से पीछे हटने के सभी रास्तों को खत्म कर देना तथा राष्ट्र-सेवा में पूरी हार्दिकता से जुट जाना।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-२-१६२१)

क्या राजकीय सेवा मेरे जीवन का चरम लक्ष्य है? सिविल

सर्विस से किसीको भी सभी तरह की सांसारिक सुख-सुविधाएं मिल सकती हैं। लेकिन क्या इन उपलब्धियों के लिए हमें अपनी आत्मा नहीं बेचनी पड़ेगी ? मैं समझता हूं कि यह धारणा कोरा पाखण्ड है कि किसीके जीवन के सर्वोच्च आदर्शों में तथा आई० सी० एस० वालों द्वारा अंगीकृत सेवा की शर्तों के अन्तर्गत मातहती में कोई संगति हो सकती है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२२-९-१९२०)

जहां तक मेरा अपना सम्बन्ध है, मैं कष्टों से घबराता नहीं हूं, मैं उनसे दूर भागने की बजाय उनका स्वागत करूंगा।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (१६-२-१९२१)

जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, मुझे अधिकाधिक यह महसूस होता है कि मुझको जीवन में एक निश्चित कार्य करना है और मेरा जन्म उसीके निमित्त हुआ है, और मुझे नैतिक विचारों की धारा में नहीं बहना है। यह विश्व का नियम है। लोग मेरी आलोचना करेंगे, लेकिन मुझ पर मेरी उदात्त आत्मचेतना के कारण उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अगर दुनिया के व्यवहार से मेरे दृष्टिकोण में कोई परिवर्तन आता है, अर्थात् मुझे दुख और निराशा होती है, तो मुझे यह मानना होगा कि इसका कारण मेरी अपनी कमजोरी है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (३१-१-१९१५)

त्याग, कष्ट और गरीबी तक के जीवन का, यदि वह राष्ट्रीय हित में हो, मैं स्वागत करूंगा।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-२-१९२१)

भावनात्मक और आर्थिक कारणों से मैं अपनी इच्छा का एकमात्र नियामक नहीं हूं। लेकिन मैं बिना किसी झिझक के कह सकता हूं कि यदि मेरे सामने विकल्प हो तो मैं इंडियन

सिविल सर्विस में हरगिज नहीं शामिल होना चाहूंगा।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२२-९-१९२०)

मेरा जीवन मेरे अपने आनन्द के लिए नहीं है। मेरे जीवन में आनन्द का अभाव तो नहीं है, लेकिन वह उपभोग के लिए नहीं है क्योंकि मेरा जीवन एक मिशन है, एक कर्तव्य है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

मेरी परिकल्पना और मेरे रुझान के अनुकूल आकर्षण के केन्द्र है—आरम्भ से ही त्याग की वृत्ति, सादा जीवन और उच्च विचार तथा देशसेवा के लिए हार्दिक अनुरक्ति। इसके अतिरिक्त एक विदेशी नौकरशाही के अधीन सेवा का सिद्धान्त मेरे लिए नितान्त त्याज्य है। मेरी दृष्टि में अरविन्द घोष का मार्ग कहीं अधिक महान् और प्रेरणादायक है, कहीं अधिक उदात्त और निस्वार्थ।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (१६-२-१९२१)

मेरे जैसे स्वभाव के व्यक्ति के लिए जो ऐसे विचारों से पुष्टि पाता रहा है, जिन्हें शायद सनक कहा जाएगा, न्यूनतम अवरोध का मार्ग सर्वोत्तम नहीं है। अगर संघर्ष नहीं रहे, अगर किसी भी खतरे का सामना न करना पड़े तो जीवन का आधा स्वाद समाप्त हो जाता है। जिस व्यक्ति की कोई सांसारिक महत्त्वाकांक्षा नही है उसके लिए जीवन की अनिश्चितताएं भयप्रद नहीं हैं।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२२-९-१९२०)

मेरे व्यक्तित्व का निर्माण जिस प्रकार हुआ है उसे देखते हुए मुझे सचमुच संदेह है कि मैं सिविल सर्विस के लिए एक उपयुक्त व्यक्ति बन सकूंगा और मैं सोचता हूं कि जो कुछ भी थोड़ी-बहुत क्षमता मुझमें है उसका अधिक अच्छा उपयोग स्वयं मेरी

भलाई के लिए और देश के हित में भी अन्य दिशाओं में हो किया जा सकता है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२२-९-१९२०)

मैं पहले एक बार कर्तव्य की पुकार पर जीवन-जलयान का यात्री बना था। अब वह जहाज एक ऐसे बन्दरगाह पर पहुंच गया है, जहां अपार आकर्षण है—जहां सत्ता, सम्पत्ति और समृद्धि मेरे इंगित मात्र से मेरी अपनी हो सकती है। लेकिन मेरे अन्तरतम से आती हुई आवाज मुझसे कहती है—'तुम्हें इनमें कोई भी सुख नहीं मिलेगा। तुम्हारे उल्लास की राह है महासागर की उत्ताल ऊर्मियों के साथ-साथ तरंगित होते जाना।' आज उसी पुकार का प्रत्युत्तर देते हुए मैं फिर अपने जलयान की पतवार प्रभु के हाथों सौंपकर यात्रा पर निकल पड़ा हूं। केवल वही जानता है कि यह जहाज किस किनारे जाकर लगेगा।

—मित्र चारुचन्द्र गांगुली को पत्र (२२-४-१९२१)

हम नहीं जानते कि मृत्यु के बाद मनुष्य कहां जाता है और इसके साथ क्या घटित होता है। लेकिन अन्त में हमारी आत्मा उस परमात्मा में लीन हो जाती है। और वही हमारे लिए सबसे अधिक उल्लास का क्षण होता है। तब न दुःख होता है न सुख और पूर्वजन्म के कष्ट से मुक्त होकर हम अनन्त आनन्द में निमग्न हो जाते हैं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

युवक

युवा मानस की यह विशिष्टता होती है कि वह औरों की बजाय अपने में अधिक विश्वास रखता है। यह शायद एक दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य है, पर यह सच्चाई है, इसमें कोई शक नहीं।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (१-८-१९२१)

युवक आन्दोलन

आज के युवक-आन्दोलन की विशेषता है—बेचैनी, वर्तमान व्यवस्था के प्रति अधैर्य और एक नये एवं उत्तम युग को लाने की तीव्र इच्छा। उत्तरदायित्व की भावना और स्वावलंबन की चेतना, इस आंदोलन का प्राण है। आज के नवयुवक अपने बुजुर्गों को ही सारी जिम्मेदारी सौंपकर सन्तोष का अनुभव नहीं करते वरन् वे यह अनुभव करते है कि एक देश और देश का भविष्य वृद्ध पीढ़ी से अधिक उनसे सवधित है। अतः यह उनका वद्ध कर्तव्य है कि वे अपने देश के भविष्य के प्रति संपूर्ण उत्तरदायित्व के उचित निर्वाह के लिए अपने को तैयार करें।

—स्टुडेंट कान्फ्रेंस लाहौर मे अध्यक्षीय भाषण (१६-१०-१६२६)

यदि हम अपनी परिधि से वाहर झांककर देखें और विश्व की घटनाओं पर विहंगम दृष्टिपात करे तो एक विशिष्ट तथ्य हमारा ध्यान आकर्षित करेगा और वह है युवकों का पुनर्जागरण। उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम जिधर भी देखते हैं, युवक आन्दोलन एक वास्तविकता बन गया है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन, कलकत्ता मे भाषण (२५-१२-१६२८)

युवक आंदोलन अपने दृष्टिकोण में संशोधनवादी नही क्रांतिकारी होते है। किसी भी युवक आंदोलन को प्रारम्भ करने से पहले वर्तमान व्यवस्था के प्रति व्यग्रता और अधीरता की भावना अस्तित्व में आनी चाहिए। व्यक्तिगत रूप से उस प्रकार के आन्दोलन को मैं बीसवीं शताब्दी की घटना अथवा आकस्मिक घटना नही मानता। सुकरात और बुद्ध के समय में लोग ससार को अच्छा बनाने की कल्पना से प्रेरित हो समाज की नवरचना का प्रयास करते रहे है। हमारे युग के आन्दोलन भी इसी प्रकार की कल्पना और प्रयत्न का वैशिष्ट लिए हुए है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता मे भाषण (२५-१२-१६२८)

युवा पीढ़ी

जहां भी पुरानी पीढ़ी के नेता असफल रहे है वहां के नवें-युवक स्वयं सचेत हुए है और उन्होंने समाज की नवरचना का उत्तरदायित्व स्वय संभाल लिया है तथा उसको पहले से अच्छा और श्रेष्ठ बनाने में मार्गदर्शन दिया है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता मे भाषण (२५-१२-१९२८)

भारत के युवक अब अपने पुराने नेताओं पर उत्तरदायित्व डालने मात्र से सन्तुष्ट नही है, और हाथ-पर-हाथ रखे बैठे नहीं रहते अथवा मूक पशुओं की भाति पीछे-पीछे नही चलते। उन्होने अनुभव किया है कि उन्हे स्वतत्र, महान्, शक्तिशाली नये भारत का निर्माण करना है। उन्होंने वह उत्तरदायित्व स्वीकार कर लिया है और वे प्रतीक्षित महान् दायित्व के लिए स्वयं को शिक्षित करने में व्यस्त है।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता मे भाषण (२५-१२-१९२८)

युवा पीढ़ी भारत को स्वतन्त्र कराने का उत्तरदायित्व स्वीकार कर चुकी है। हम अपने नेताओं को चाहते है, उन्हें प्यार करते है, उनका आदर करते है, लेकिन हम चाहते है' कि वे भी समय के साथ चलें।...यदि हमारे बुजुर्ग नेता युवकों के साथ समन्वय नहीं रखेंगे तो नये और पुरानों के बीच दरार पैदा हो जाएगी। देश के युवा वर्ग को एक नई विचारशक्ति प्राप्त हुई है और वे अंधानुकरण नही कर सकेंगे। वे समझ चुके है कि भविष्य के उत्तराधिकारी वही हैं और उन्हें ही भारत को स्वतंत्र कराना है और चेतना के उद्गम के साथ वे स्वय को—कर्तव्य के लिए तैयार कर रहे है, जो उनकी प्रतीक्षा कर रहा है।

—कलकत्ता अधिवेशन मे भाषण (दिसम्बर १९२८)

युवा-संगठन

मैं आपसे युवा जाग्रति और युवक आन्दोलन के संगठन में सहायता देने की प्रार्थना करता हूं। आत्मचेतस युवक केवल कार्य ही नहीं करेगा, कल्पना भी करेगा; केवल ध्वंस ही नहीं करेगा, निर्माण भी करेगा। यह वहां भी सफल होगा जहां कहीं आप असफल हो जाएंगे; यह आपके लिए नये भारत का निर्माण करेगा—एक स्वतन्त्र भारत—असफलताओं, प्रयत्नों और पूर्व अनुभवों से अलग। विश्वास कीजिए, यदि हम साम्यवाद और धर्मांधता के नासूर से मुक्त होना चाहते है तो हमें अपने युवकों में काम प्रारम्भ करना होगा।

—महाराष्ट्र प्रातीय कान्फ्रेंस पूना में अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

युवक-युवतियों के किसी भी संगठन को युवक संगठन की संज्ञा देना उचित नहीं होगा। सामाजिक सेवा करने वाली अथवा अकाल पीड़ितों को राहत पहुंचाने का काम करने वाली किसी भी संस्था के लिए यह जरूरी नहीं है कि वह युवक संगठन हो। युवक संगठन की विशेषता है—वर्तमान व्यवस्था से असन्तोष और उसे बदलकर उससे अच्छी व्यवस्था लाने की आकांक्षा।

—अखिल भारतीय युवक सम्मेलन कलकत्ता में भाषण (२५-१२-१९२८)

योगी

वह योगी है जिसने संसार में व्यर्थता का अनुभव कर लिया है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (३-१०-१९१५)

रचनात्मक प्रतिभा

इससे काम नहीं चलेगा कि हम हरफनमौला बनें। जरूरत इस बात की है कि हम अपनी समस्त जानकारी को एक व्यवस्था

के अनुसार संगठित करें, और किसी एक विषय की पूरी जानकारी प्राप्त करें। केवल आत्मसात् करना यथेष्ठ नहीं होगा, वल्कि आवश्यकता है रचनात्मक प्रतिभा की।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१८-७-१६१५)

राजनीति

हममें से अनेक यह भूल जाते है कि राजनीति अन्ततोगत्वा गत्यात्मक और सदैव परिवर्तनशील है। अगर हम अपनी पतवारों को विश्राम दे दें, और अपनी पुराने बलिदानों तथा सेवा के वल पर सदैव के लिए प्रतिष्ठा का दावा करें तो निश्चय ही हम विनाश के गर्त में गिर जाएंगे। यदि हमें सदैव अग्र पंक्ति में रहना है तो हमको निरन्तर आगे बढ़ते रहना होगा।

—क्रास रोड्स, पृ० २२२

राजनीति को धारा शनैः-शनैः जिस प्रकार पकिल होती जा रही है, उससे तो ऐसा प्रतीत होता है कि कम-से-कम थोड़े दिन के लिए तो राजनीति से देश का कोई लाभ नही होगा। सत्य और त्याग के आदर्श राजनीति के क्षेत्र में जितनी जल्दी लोप हो जाते हैं, राजनीति की कार्यशक्ति का उतनी ही शीघ्रता से ह्रास होता है। राजनीतिक आन्दोलन रूपी सरिता की धारा कभी स्वच्छ रहती है तो कभी पंकिल; सभी देशों में ऐसा होता है।

—श्री हरिचरण वागची को पत्र (१६२६)

राजनीतिक दर्शन

हमारा राजनैतिक दर्शन राष्ट्रीय समाजवाद और साम्यवाद का समन्वित रूप होना चाहिए।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १६४४)

राजनीति का क्षेत्र

राजनीति का क्षेत्र मेरे लिए उपयुक्त कर्मक्षेत्र नहीं है, मैं तो घटनाचक्र के कारण राजनीति के भंवर में आ फंसा हूं। इस स्थिति में मैं भी अपने उपयुक्त कर्मक्षेत्र में लौट सकता हूं। ससार में मेरो आसक्ति नही है इस कारण मैंने गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश ही नहीं किया है। क्या मैं देश की वर्तमान दशा में शान्ति का मार्ग छोड़कर नये सिरे से संसार-जाल में लिप्त होऊं?

—पत्रावली, पृ० २६४

रामकृष्ण परमहंस

रामकृष्ण परमहंस बार-बार इस बात को दोहराया करते थे कि आत्मानुभूति के लिए त्याग एक अनिवार्य शर्त है और सम्पूर्ण अहंकार शून्यता के बिना आध्यात्मिक विकास असम्भव है। उनके उपदेशों मे कोई नयी बात नहीं थी। वे वस्तुतः उतने ही पुराने है जितनी भारतीय सभ्यता। हजारों वर्ष पूर्व उपनिषदों ने हमें बताया था कि सांसारिक वासनाओं के त्याग से ही अमर जीवन की प्राप्ति हो सकती है। परन्तु रामकृष्ण के उपदेशों की विशेषता यह थी कि उन्होंने जो कुछ कहा उसके अनुरूप अपने जीवन को ढाला और उनके शिष्यों के अनुसार वे आध्यात्मिक प्रगति की चरम सीमा तक पहुंच सके।

—आत्मकथा, अध्याय ५

राममोहन राय

अपनी दूरदेशी के कारण राममोहन राय ने अपने किसी भी अन्य देशवासी से पहले ही यह अनुमान लगा लिया था कि अगर भारत को फिर अपना खोया गौरव प्राप्त करना है तो उसे पाश्चात्य विज्ञान और चिन्तन को हृदयंगम करना ही होगा।

—आत्मकथा, अध्याय ३

कुछ लोग सन्देह कर सकते हैं कि क्या एक राष्ट्र एक उच्च नैतिक स्तर तक उठ सकता है, क्या एक राष्ट्र दूरदर्शी और स्वार्थरहित हो सकता है तथा नयी व्यवस्था को स्थापित करने का उत्तरदायित्व ले सकता है। मुझे मानव जाति में पूरा विश्वास है। यदि किसी व्यक्ति के लिए निस्वार्थी होना, उच्च नैतिक स्तर पर अपना जीवन जीना सम्भव है तो मैं कोई कारण नहीं देखता कि समूचा राष्ट्र भी क्यों नहीं उस स्तर तक उठ सकेगा? विश्व के इतिहास में हमने ऐसे उदाहरण देखे हैं, जिनमें क्रान्ति ने सम्पूर्ण राष्ट्र की मानसिकता को बदल दिया है और इसे नैतिकता के उच्च स्तर तक उठा दिया है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १६४४)

जीवन्त और प्रगतिशील राष्ट्रों में प्राचीन और नवीन के बीच एक सम्बन्ध रहता है। अतीत का ज्ञान और अनुभव उभरती हुई पीढ़ियों को बिना किसी अवरोध के उपलब्ध रहता है। इसके विपरीत स्वभावतया उग्र सुधारवादी और प्रगतिशील युवावर्ग बुजुर्गों से पथ-प्रदर्शन और परामर्श तो चाहता है किन्तु अपनी गत्यात्मकता को त्यागना नहीं चाहता।

—क्रास रोड्स, पृ० २५३

मेरी यह व्यक्तिगत राय है कि यदि एक राष्ट्र अपनी प्राण-शक्ति, अपनी आन्तरिक सजीवता खो देता है तो उसे जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं है। और यदि यह प्राणशक्ति खो देने के बाद भी वह जीवित रहता है तो उस अस्तित्व का मानव जाति के लिए कोई मूल्य नही रह जाता।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १६४४)

राष्ट्र का निर्माण

हम अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के आधार पर नवीन और आधुनिक राष्ट्र का निर्माण करना चाहते हैं। इसके लिए हमें आधुनिक उद्योगों, आधुनिक सेना और उन सब वस्तुओं की जरूरत होगी जो हमारे अस्तित्व और आधुनिक परिस्थितियों में हमारी स्वतन्त्रता को संरक्षित रखने में आवश्यक हैं।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सबोधन (नवम्बर, १९४४)

राष्ट्रीय एकता

स्वतन्त्र हो जाने पर यदि हम एक राष्ट्र के रूप में संगठित होना चाहते हैं, तो यथार्थ में हमें कठोर परिश्रम करना होगा। राष्ट्रीय एकता और संगठन को विकसित करने के लिए अनेक बातों की आवश्यकता है, यथा—एक सामान्य भाषा, एक सामान्य वेशभूषा, एक सामान्य आहार इत्यादि।...मेरे विचार से एकता की समस्या व्यापक रूप से एक मनोवैज्ञानिक समस्या है, लोगों को यह अनुभव कराने के लिए कि वे एक राष्ट्र के हैं, शिक्षित करना होगा और लोगों को अभ्यास कराना होगा।

—क्रास रोड्स, पृ० ५४

राष्ट्रीय मुक्ति

हम जिस राष्ट्रीय मुक्ति की कामना करते हैं वह त्याग और कष्ट-सहिष्णुता के रूप में अपनी कीमत लिए बिना नहीं मिल सकती। हममें से जिनके पास यह अनुभव करने के लिए हृदय है और ये कष्ट सहने के लिए अवसर हैं, उन्हें पूजा के ये पुष्प लेकर आगे आना चाहिए।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-४-१९२१)

राष्ट्रोत्थान

केवल त्याग और कष्ट-सहन को धरती पर ही राष्ट्र के उत्थान की नींव डाली जा सकती है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (६-४-१९२१)

रुपया

जो रुपया उपार्जन करे उसे यह भाव हृदय में रखना चाहिए—'रुपया मिट्टी; मिट्टी रुपया।' यह भाव हृदय में रखने से मनुष्य स्वार्थी अथवा कंजूस नहीं बन सकेगा।

—पत्रावली, पृ० २५५

रूढ़िवाद

भारत जैसे देश में और विशेषतया ऐसे परिवारों में जहां रूढ़िवादी, पुरातन, साम्प्रदायिक अथवा जातिवादी प्रभाव सर्वोपरि है, यह कतई सम्भव है कि कोई परिपक्वावस्था तक पहुंच जाए और विश्वविद्यालय को उच्च डिग्रियां भी प्राप्त कर ले लेकिन फिर भी रूढ़िमुक्त न हो पाए। ऐसे व्यक्ति को अकसर सामाजिक अथवा पारिवारिक रूढ़ियों के विरुद्ध विद्रोह करना ही पड़ता है।

—आत्मकथा, अध्याय ५

लक्ष्य (भारतीयों का)

सम्पूर्ण भारतीय बलिदान के आदर्श में विश्वास करते हैं। हिन्दुओं में हम संन्यासियों का आदर्श रखते हैं और मुस्लिम फकीरों के मार्ग को अपनाते हैं। क्या भारत के अट्ठाईस करोड़ मनुष्यों की आत्माओं की मुक्ति की अपेक्षा कोई अन्य महान् उद्देश्य, श्रेष्ठ प्रयोजन और पवित्र लक्ष्य हो सकता है?

—धनिकों से (२६-१०-१९४३)

लिपि

मैं यह सोचने को बाध्य हूं कि अन्तिम और सर्वाधिक उप-

मुक्त समाधान यह है कि हम एक लिपि को स्वीकार करें जो हमें शेप संसार में सही मार्ग पर ला सके।

—हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१६-२-१६३८)

मैं व्यक्तिगत रूप से लैटिन लिपि का समर्थक हूं। क्योंकि हमको एक आधुनिक संसार में रहना है, हमें अन्य देशों के साथ सम्पर्क रखना होगा और भले ही हम इसे पसन्द करें अथवा न करें, लैटिन लिपि को सीखना होगा। यदि हम देशभर में लेखन का माध्यम लैटिन लिपि को बना सकें तो इससे हमारी भाषा-समस्या सुलझ जाएगी।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १६४४)

राष्ट्रीय एकता के विकास हेतु हमें एक सामान्य भाषा और सामान्य लिपि विकसित करनी होगी।

—हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१६-२-१६३८)

सम्पूर्ण देश के लिए एक समान लिपि का चुनाव पूर्णरूपेण वैज्ञानिक और निष्पक्ष भावना से एवं प्रत्येक प्रकार के पूर्वग्रह से मुक्त होकर किया जाना चाहिए।...जहां तक हमारी जनता का प्रश्न है, ६० प्रतिशत निरक्षर है और किसी भी लिपि से परिचित नहीं है और यह बात उनके लिए महत्त्वपूर्ण नहीं होगी कि जब उन्हें शिक्षित किया जाएगा तो किस लिपि का आरम्भ किया जाएगा। रोमन लिपि उन्हें यूरोप की भाषा सीखने में अधिक सहायक होगी। मैं भली भांति जानता हूं कि हमारे देश में रोमन लिपि का तुरन्त ग्रहण कितना अधिक अलोकप्रिय होगा। जो कुछ भी हो, मैं अपने देशवासियों से मांग करता हूं कि वे उसी पर विचार करें जो आगे चलकर सर्वाधिक बुद्धिमत्तापूर्ण समाधान हो।

—हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१६-२-१६३८)

लोकतन्त्र

लोकतंत्र निश्चय ही पाश्चात्य संस्था नहीं है, यह मानवीय संस्था है। जहां कहीं मानव ने राजनैतिक संस्थाएं विकसित करने का प्रयत्न किया है, उसने अद्भुत लोकतंत्रीय संस्था को विकसित किया है। प्राचीन भारतीय इतिहास लोकतंत्रीय संस्थाओं के उदाहरणों से परिपूर्ण है।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस, पूना के अध्यक्षीय पद से भाषण
(३ मई, १९२८)

लोकमान्य तिलक

उनकी शारीरिक यातनाओं के सम्बन्ध में जितना कम कहा जाए उतना ही उत्तम है। वे दण्ड संहिता के आधीन एक सिद्ध दोषी थे। अतः आज के राजवन्दियों की अपेक्षा उनको कुछ अंशों में अधिक ही यातनाएं भोगनी पड़ी होंगी। केवल इतना ही नहीं, वे मधुमेह से भी पीड़ित थे।

—श्री एन० सी० केलकर को पत्र (मांडले, २८-८-१९२५)

यह तो हम सबको विदित है कि लोकमान्य ६ वर्ष तक कारागार में रहे; परन्तु मेरी यह पक्की धारणा है कि कदाचित् ही हममें से कोई यह जानता है कि उन्होंने इस अवधि में कैसी-कैसी शारीरिक और मानसिक यातनाएं भोगीं। मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास है कि वे यहां अकेले रहे। यहां उनका कोई बुद्धिजीवी साथी भी न था। केवल इतना ही नहीं, बल्कि वे अन्य बन्दियों से मिल-जुल भी नहीं सकते थे। सान्त्वना के लिए केवल पुस्तकों का ही उन्हें एकमात्र सहारा था, अन्यथा उनका जीवन पूर्णरूपेण एकाकी था।

—श्री एन० सी० केलकर को पत्र (मांडले, २८-८-१९२५)

लोकमान्य तिलक के गीता-भाष्य जैसे गहन एवं उत्कृष्ट

ग्रंथ को सर्वथा विपरीत, उत्साह भंग करने वाले और शारीरिक शक्ति को क्षीण करने वाले वातावरण में रहते हुए प्रस्तुत करने के लिए, बौद्धिक योग्यता के अतिरिक्त, कितनी आत्मशक्ति, साधनों की कितनी गम्भीरता एवं सहनशीलता की आवश्यकता पड़ी होगी, इस रहस्य की अनुभूति कुछ समय के लिए जेल जाने के उपरान्त ही सम्भव है। जहां तक मेरा व्यक्तिगत प्रश्न है—जितना-जितना मैं इस विषय पर मनन करता हूं, उतना ही उतना मै श्रद्धा और आदर से आत्मविभोर हो जाता हूं।

—श्री एन० सी० केलकर को पत्र (माडले, २८-८-१९२५)

व्यक्तिगत हानि की पूर्ति तो समय की गति के साथ-साथ हो जाएगी, परन्तु मेरे विचार से, जनता के लिए इस हानि की मात्रा, समय की समाप्ति के साथ-साथ अधिकाधिक स्पष्ट होती जाएगी। उनकी बहुज्ञता इतनी उत्कृष्ट थी, उनके क्रिया-कलाप इतने व्यापक थे कि उनके निधन से जनता को आघात पहुंचना अवश्यंभावी है।

—श्री दिलीपकुमार राय को पत्र (मांडले, ११-६-१९२५)

लोकहित

समाज या देश के जीवन-स्रोतों से अपने आपको दूर हटाकर रखने से मनुष्य गुमराह हो सकता है और उसकी प्रतिभा का एकपक्षीय विकास होने के कारण वह समाज से भिन्न अतिमानव के समान और कुछ बन सकता है। दो-चार असाधारण प्रतिभा-सम्पन्न यथार्थ साधकों की बात तो अवश्य ही भिन्न है परन्तु अधिकांश लोगों के लिए तो कर्म या लोकहित ही साधना का एक प्रधान अंग है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (६-१०-१९२५)

विचार

जो विचार किशोरावस्था में सभी अवरोधों से टक्कर लेते हुए संघर्ष के बीच अपनी राह बनाने के लिए कसमसाते रहते हैं, वे ही उम्र बढ़ने के साथ गंभीर बनते जाते हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९१७)

जो विचार सीधे हमारे हृदय से उद्भूत होते हैं, वे अन्य विचारों की अपेक्षा कहीं अधिक सक्षम होते हैं, भले ही हार्दिक विचारों की भाषा सीधी-सादी और अलंकृत हो तथा अन्य विचार आलंकारिक भाषा और शैली में व्यक्त किए गए हों।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (कटक)

यदि मनुष्य के मन में सोचने के लिए पर्याप्त विषय हैं तो बन्दी होने पर भी उसे कोई कष्ट नहीं होता।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (२-५-१९२५)

विजय हमारी होगी

अपनी आजादी और अधिकारों के लिए जब हम संसार के सबसे बड़े साम्राज्य से लड़ रहे हैं और जब हमें विश्वास है कि अन्त में विजय हमारी ही होगी, तब हम किसी राष्ट्र द्वारा अपनी नस्ल और संस्कृति पर किए गए हमले को बर्दाश्त नहीं कर सकते।

—सुभाषचंद्र बोस, पृ० ७०

पूर्व एशिया के हम भारतीय आज स्वतंत्र और संयुक्त भारत के लिए लड़ रहे हैं। हमने अपनी मातृभूमि को मुक्त करने का प्रस्ताव किया है और हमें विश्वास है कि अंततोगत्वा हम सफल होंगे। यह लड़ाई कितनी ही लम्बी और कठिन क्यों न हो, हमें दृढ़ विश्वास है कि अंत में सत्य और न्याय की विजय होगी तथा भारत की मुक्ति के लिए हमारा संघर्ष सफल होगा।

—बर्मा से प्रसारण (१२-९-१९४४)

विदेशस्थित भारतीय

आप विदेशों में स्थित अपने देशवासियों पर पूरा भरोसा करें। वे भारत को शीघ्र मुक्ति दिलाने के लिए दिलोजान से आपके साथ हैं और इसके लिए बराबर काम कर रहे हैं। आज हम भारत के राष्ट्रीय सम्मान के संरक्षक हैं और आजाद हिन्द के गैरसरकारी राजदूत हैं। जैसे देश में, वैसे ही विदेशों में, इस आजादी के लिए सदैव डटे रहेंगे और अपनी राष्ट्रीय सार्वभौमिकता पर किसी विदेशी सत्ता का अतिक्रमण कभी नहीं होने देंगे।

—आजाद हिन्द रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८-१९४२)

जहां तक विदेश स्थित भारतीयों के दृष्टिकोण का प्रश्न है, मैं नहीं समझता कि कोई स्त्री या पुरुष ऐसा हो सकता है जो नहीं चाहता कि भारत स्वतंत्र हो और जो राष्ट्रीय संघर्ष में सहायता करने को तत्पर न हो।

—सिंगापुर मे आम सभा (९-७-१९४३)

विदेशी मित्र

विचारधाराओं के चक्कर में पड़कर कभी मत बहकिए और दूसरे देशों की आन्तरिक राजनीति पर न जाइए। ये बातें हमारे लिए किसी मतलब की नही हैं। जब मैं यह कहता हूं कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के दुश्मन हमारे दोस्त और साथी हैं तो मेरा विश्वास कीजिए। ब्रिटिश साम्राज्य को टूटते और भारत को आजाद होते देखना उनके हित में है क्योंकि वे भली भांति जानते हैं कि जब तक भारत ब्रिटिश जुए के नीचे है, तब तक उनकी जीत नही हो सकती। राजनीतिक क्षेत्र में कोई यह आशा नही कर सकता कि विदेशी ताकतों के अपने हित में न होते हुए भी वे हमसे सहानुभूति करेंगी। अगर कोई ऐसी आशा

करे तो मैं उनमें सबसे अंतिम व्यक्ति ही हो सकता हूं।

—आजाद हिंद रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (३१-८ १९४२)

विदेशी सहायता

यदि सर्वशक्तिमान ब्रिटिश सरकार, भिक्षापात्र लेकर संसार में हर जगह, यहां तक कि गुलाम और साधनहीन भारतीयों से भी—*सहायता मांगने के लिए घूम सकती है तो बाध्य किए जाने* पर तो हमारे द्वारा बाहर से सहायता लेने में कोई हर्ज नहीं है।

—सिंगापुर मे आम सभा (९-७-१९४३)

विद्यार्थी

आमतौर पर विद्यार्थी किसी राष्ट्र के सर्वाधिक आदर्शवादी भाग का प्रतिनिधित्व करते हैं और यह उनकी अंतर्निहित आदर्शवादिता का ही परिणाम है कि विश्व के विद्यार्थी यह अनुभव करते हैं कि वे एक ही बड़ी बिरादरी के सदस्य हैं। हमारा यह कर्तव्य होना चाहिए कि हम अपने विद्यार्थियों में एकता की इस भावना को पनपाएं ताकि उनके माध्यम से भारतीय जनता आने वाले सभी कालों के लिए एक राष्ट्र के रूप में जुड़ जाए।

—[illegible], पृ० ३१

प्रत्येक छात्र के लिए एक शक्तिशाली और स्वस्थ शरीर, सुदृढ़ चरित्र और आवश्यक सूचनाओं एवं स्वस्थ गतिशील विचारों से परिपूर्ण मस्तिष्क अपेक्षित है। यदि अधिकारियों द्वारा किए गए प्रबंध स्वास्थ्य, चरित्र और बुद्धि के सही प्रस्फुटन में सहायक नहीं होते, तो आपको वे सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए जो इस प्रस्फुटन को सुनिश्चित कर सकें। और यदि अधिकारी इस दिशा में आपके प्रयत्नों का स्वागत करें, तो और भी अच्छी बात है किन्तु यदि वे इस ओर ध्यान नहीं दें तो उन्हें छोड़ दो और अपने रास्ते जाओ। आपका जीवन आपका अपना है और

[illegible]

इसके विकास का उत्तरदायित्व दूसरों से ज्यादा आपके ऊपर है।

—स्टूडेण्ट कान्फ्रेंस लाहौर में अध्यक्षीय भाषण (१६-१०-१६२६)

विद्यार्थी और राजनीति

छात्र आन्दोलन का दूसरा अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू भावी नागरिक को प्रशिक्षित करना है। यह प्रशिक्षण बौद्धिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार का होगा। हमें छात्रों के सामने आदर्श समाज की दृष्टि रखनी है, जिसे उन्हें अपने जीवन में चरितार्थ करने का प्रयत्न करना चाहिए। वे उसका अपनी सामर्थ्यानुसार अनुसरण करने का प्रयत्न करें ताकि छात्र के रूप में अपने दायित्व को पूरा करते समय वे स्वयं को विश्वविद्यालय के पश्चात् जीवनक्रम के लिए तैयार कर सकें।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर में अध्यक्षीय भाषण (१६-१०-१६२६)

मैं जानता हूं कि इस देश में ऐसे लोग हैं—यहां तक कि प्रसिद्ध व्यक्ति भी—जो यह सोचते हैं कि गुलाम जाति की कोई राजनीति नहीं होती और यह कि विशेष रूप से विद्यार्थियों को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिए। परंतु मेरा अपना विचार यह है कि एक गुलाम जाति के पास राजनीति के अतिरिक्त कुछ होता ही नहीं है। एक पराधीन देश में प्रत्येक समस्या, जो आप सोच सकते हैं, उचित प्रकार से विश्लेषित किए जाने पर मूलत एक राजनीतिक समस्या सिद्ध होगी। जैसा कि स्व० देशबंधु चितरजनदास कहा करते थे 'जीवन एक पूर्ण इकाई है' और इसलिए आप राजनीति को शिक्षा से अलग नहीं कर सकते। मानव जीवन को विभागों में नहीं बांटा जा सकता।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर में अध्यक्षीय भाषण (१६-१०-१६२६)

मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि राजनीति में भाग लेने पर विशेष पाबंदी क्यों लगाई जाए जबकि सामान्य रूप से राष्ट्रकार्य

में भाग लेने पर कोई पाबंदी नहीं लगाई जाती। सारे राष्ट्रकार्य पर पाबंदी की बात तो मेरी समझ में आती है किन्तु मात्र राजनीतिक कार्य पर पाबंदी निरर्थक है। एक पराधीन देश में, यदि समस्याएं मूलतः राजनीतिक समस्याएं हैं तो सारे क्रिया-कलाप भी वास्तव में राजनीतिक ही हैं। किसी भी स्वाधीन देश में राजनीति में भाग लेने पर कोई पाबंदी नहीं है, इसके विपरीत विद्यार्थियों को राजनीति में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाता है, क्योंकि विद्यार्थियों में से ही राजनीतिक, विचारक और राजनीतिज्ञ उत्पन्न होते हैं।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर में अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

यदि भारत में विद्यार्थी सक्रिय राजनीति में भाग नहीं लेंगे तो हम अपने राजनीतिक कार्यकर्ताओं की भर्ती कहां से करेंगे और हम उन्हें प्रशिक्षित कहां करेंगे ? इसके अतिरिक्त यह स्वीकार करना होगा कि राजनीति में भाग लेना चरित्र और पौरुष के विकास के लिए आवश्यक है।

क्रिया-विहीन विचार चरित्र-निर्माण के लिए पर्याप्त नही है और इसी कारण से स्वस्थ क्रिया-कलाप—राजनीतिक,सामाजिक अथवा कलात्मक—में भाग लेना चरित्र के विकास के लिए आवश्यक है। विश्वविद्यालयों को केवल किताबी कीड़े, स्वर्णपदक विजेता और कार्यालय लिपिक उत्पन्न नही करने हैं, वरन् ऐसे चरित्रवान व्यक्ति उत्पन्न करने है जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपने देश के लिए महानता को प्राप्त करके यश अर्जित करें।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर मे अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

राष्ट्रीय जीवन के सभी पक्ष परस्पर संबंधित होते हैं और इसकी सभी समस्याएं गुंथी हुई रहती हैं। इस कारण से एक गुलाम जाति की सारी बुराइयों और कमियों का कारण राजनीतिक यानी राजनीतिक दासता ही होगा। परिणामतः विद्यार्थी

को राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की अति महत्त्वपूर्ण समस्या को अनदेखा नहीं कर सकते।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर में अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

विद्यार्थी परिषद्

मैं चाहता हूं कि हमारी छात्र परिषदों को अपने संबंधित क्षेत्रों में मात्र छात्रों के लाभ के लिए सहकारी स्वदेशी स्टोर प्रारंभ करने चाहिए। यदि ऐसे स्टोर स्वयं छात्रों द्वारा कुशलतापूर्वक चलाए गए तो उनसे दुहरे उद्देश्य की प्राप्ति होगी। एक ओर स्वदेशी वस्तुएं छात्रों को सस्ते मूल्य पर उपलब्ध होंगी और इससे गृह उद्योगों को प्रोत्साहन मिलेगा, दूसरी ओर छात्र सहकारी स्टोर चलाने का अनुभव प्राप्त कर सकेंगे और प्राप्त हुए लाभ को छात्र समुदाय के कल्याण में खर्च कर सकेंगे।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर मे अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

विद्यालय

मैं कुछ भारतीयों के इस प्रयत्न की तीव्र निन्दा करता हूं कि वे इंग्लिश पब्लिक स्कूलों के ढंग पर अंग्रेज शिक्षकों की सहायता से भारतीय स्कूल चलाना चाहते है। यह संभव है कि कुछ लड़के, विशेषतया वे जो मानसिक दृष्टि से वहिर्मुखी है, विगति का अनुभव करें और वैसे वातावरण में काफी खुशी अनुभव करें, लेकिन अंतर्मुखी बच्चों को कष्ट का अनुभव अवश्य होगा, और उस स्थिति में इस पद्धति के और इसके पीछे जो भी जीवन-दृष्टि है, उसके प्रति विरोधी प्रतिक्रिया अवश्यम्भावी है।

—आत्मकथा, अध्याय ४

विभाजन

क्या यह सम्भव है कि किसी राष्ट्र के जीवन को दो खानों में बांट दिया जाए और एक को तो विदेशियों को सौंप दिया

जाए तथा दूसरे को अपने लिए आरक्षित रखा जाए ? क्यों हमारे लिए यह संभव है कि हम जीवन को उसकी समग्रता में ही वर्गीकृत या निरस्त करें ?

—आत्मकथा, अध्याय ७

विरक्त

विरक्तों को दो श्रेणियां होती है। एक वे जो किसी-न-किसी संगठन, आश्रम या मठ से सम्बद्ध होते हैं और दूसरे वे जो सर्वथा स्वतंत्र होते हैं, जिनके पीछे कोई संगठन नही होता और जो किसी भी तरह के उलझाव से बचकर चलते है।

—आत्मकथा, अध्याय ५

विरोधाभास

हमें विरोधाभासों के बीच से होकर गुजरना होता है। वे हमारे जीवन को पूर्ण बनाते हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-६-१६१५)

विश्वास

मुझे पराजित करने के लिए शत्रु बार-बार अपने दलों को संगठित कर रहे है। अदृश्य शक्ति के बल से ही मैं उन्हें बार-बार पछाड़ता आया हूं। निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि अन्त में क्या होगा ? परन्तु स्मरण रहे कि सन्तान की विजय का अर्थ मां की विजय है; सन्तान की पराजय का तात्पर्य है माता की पराजय।

—पत्रावली, पृ० २७६

वीरपूजा

जो महान् होना चाहते है उनको जहां कहीं भी महानता दीखे उसकी पूजा करते हुए अपना जीवन प्रारम्भ करना चाहिए।

जो वीर नायक बनना चाहते हैं उन्हें सर्वप्रथम वीरपूजा सीखनी चाहिए।

—क्रास रोड्स, पृ० ३२५

शक्ति

भय पर विजय प्राप्त करने का उपाय है शक्ति, विशेष रूप से दुर्गा, काली, आदि की शक्ति की साधना करना। शक्ति के किसी भी रूप की मन में कल्पना करके प्रार्थना करने और चरणों में मन की दुर्बलता और मलिनता को अर्पित कर देने से मनुष्य शक्ति प्राप्त कर सकता है। हमारे भीतर अनन्त शक्ति निहित है। उस शक्ति का बोध करना पड़ेगा।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२६)

हमारा सम्पूर्ण अस्तित्व सबलता की भावना से ओत-प्रोत होना चाहिए। हमें फिर पर्वतों को लांघना है, जब आर्यों ने यह सब किया था तभी वे हमें वेद दे पाए थे।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९-१०-१९१५)

शरीर

जो शरीर क्षणभंगुर है और जिसे अन्ततः मिट्टी में मिल जाना है, उसकी चिन्ता करने से क्या लाभ? श्रमवीर के लिए उदासीनता का यह दृष्टिकोण अत्यन्त अवांछनीय है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२१-१-१९२०)

शान्ति

अपने में ही चेतना को केन्द्रित रखने और आत्मविश्वास के स्रोत में जीवन-नैया को बहाने में परम शान्ति है। अधिक समय तक विपरीत स्थिति में रहना हो तो शान्त मन ही एकमात्र अवलम्ब है। इस कारण लम्बे कारावास की सम्भावना में मैं एक अपूर्व शान्ति अनुभव कर रहा हूं।

—पत्रावली, पृ० २३०

शाकाहार

मैं निरामिषभोजी होना चाहता हूं। लेकिन इस डर से मैं अभी तक ऐसा नहीं कर सका हूं कि लोग मेरे इस कदम का विरोध करेंगे या इसका कुछ और अर्थ निकालेंगे। मैं इसलिए शाकाहारी होना चाहता हूं कि हमारे ऋषियों ने कहा है कि अहिंसा एक महान् गुण है। केवल ऋषियों ने ही नहीं, बल्कि स्वयं भगवान ने ऐसा कहा है। इसलिए भगवान की सृष्टि को नष्ट करने का हमें क्या अधिकार है? क्या ऐसा करना महान् पाप नहीं है? जो लोग कहते हैं कि अगर मछली न खाई जाए तो नेत्र ज्योति मंद पड़ जाती है, वे गलती पर हैं। हमारे ऋषि इतने अज्ञानी नहीं थे कि अगर मछली न खाने से लोग अंधे हो जाते तो वे मछली खाने का निषेध करते।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् [illegible])

शासन-तंत्र

हम अनुभव करते हैं कि हमारे देश में संस्थाओं और संगठनों का जाल खड़ा करके और उनके संचालन के लिए अधिकारियों का तंत्र खड़ा करके नौकरशाही ने स्वयं को संस्थापित कर लिया है। ये नौकरशाही तंत्र की चौकियां हैं और उनके माध्यम से नौकरशाही ने लोगों के सिरों पर अधिकार जमा लिया है। हमें शक्ति के इन सिरों पर प्रहार करना है और इसी उद्देश्य से समानांतर संस्थाएं खड़ी करनी हैं।

—महाराष्ट्र यात्रा में पूना के [illegible] भाषण (3 मई, [illegible])

शासन-पद्धति

–

पद्धतियों का समन्वित रूप हो।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधन (नवम्बर, १९४४)

हमको भारत में प्रजातांत्रिक संस्थाओं का कुछ अनुभव है और हमने फ्रांस, इंग्लैण्ड तथा अमेरिका जैसे देशों में भी प्रजातांत्रिक संस्थाओं की कार्य-प्रणाली का अध्ययन किया है। और हम इस परिणाम पर पहुंचे है कि हम प्रजातांत्रिक प्रणाली को अपनाकर स्वतंत्र भारत की समस्याओं को नहीं सुलझा सकते। अतः भारत में आधुनिक प्रगतिशील विचार एक अधिनायकवादी राज्य के पक्ष में हैं जो जनता के सेवक अथवा अंग के रूप में कार्य करेगा, कुछ धनी व्यक्तियों के अथवा किसी गुट के सेवक के रूप में नहीं।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १९४४)

शिक्षक

यदि शिक्षक योग्य नहीं तो प्राथमिक शिक्षा सफल नहीं हो सकती। सर्वप्रथम तो शिक्षक को प्राथमिक शिक्षा के मौखिक सिद्धान्त समझने चाहिए। तभी वह नई प्रणाली से शिक्षा प्रदान कर सकता है। शिक्षक को अपने हृदय में प्रेम और सहानुभूति को स्थान देना होगा। यह आवश्यक है कि वह छात्रों के दृष्टिकोण से ही सब वस्तुओं को देखे। यदि शिक्षक अपनी कल्पना छात्रों की स्थिति में नहीं कर सकता तो वह किस प्रकार छात्रों की कठिनाइयों और भ्रांति को समझ सकता है। इसी कारण अध्यापक का व्यक्तित्व सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है। शिक्षा के प्रमुख उत्पादन तीन हैं—(१) *शिक्षक का व्यक्तित्व*, (२) *शिक्षा-*प्रणाली, (३) शिक्षा के विषय और पाठ्य-पुस्तकें। यदि शिक्षक का व्यक्तित्व प्रभावशाली नहीं है तो किसी भी प्रकार की शिक्षा सम्भव नहीं हो सकती। चरित्रवान, *व्यक्तित्व-सम्पन्न शिक्षक*

मिल जाए तभी शिक्षा की प्रणाली निर्धारित हो सकती है। फिर तो किसी भी विषय की पुस्तक सरलता से पढ़ाई जा सकती है।

—श्री हरिचरण बागची के नाम पत्र (१९२६)

शिक्षक को अपने हृदय में प्रेम और सहानुभूति को स्थान देना होगा। यह आवश्यक है कि वह छात्रों के दृष्टिकोण से ही सब वस्तुओं को देखे। यदि शिक्षक अपनी कल्पना छात्रों की स्थिति में नहीं कर सकता तो वह किस प्रकार छात्रों की कठिनाइयों और भ्रांतियों को समझ सकता है। इसी कारण अध्यापक का व्यक्तित्व सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२६)

शिक्षा

कहानियों के माध्यम से शिक्षा देना सर्वाधिक लाभप्रद और आवश्यक है, इससे छात्रों को इस बात का अनुभव ही नहीं होता कि वे कुछ लिखना-पढ़ना भी सीख रहे हैं। वे तो यही समझते है कि कहानी सुन रहे हैं या खेल रहे है। प्रथम अवस्था में पाठ्य पुस्तकों की कोई आवश्यकता नही है। जब पेड़-पौधे, फूल आदि के सम्बन्ध में बताओ तब उनके समक्ष ये सब रहने चाहिए। जब उन्हें आकाश और नक्षत्रों के सम्बन्ध में बताओ तब उन्हें खुले आकाश के नीचे ले जाकर सिखाना चाहिए। जो कुछ उन्हें सिखाओ वह उनके नेत्रों के समक्ष उपस्थित रहना चाहिए। जब भूगोल पढ़ाओ तब मानचित्र, ग्लोब आदि रहना चाहिए। जब इतिहास पढ़ाओ तब सुविधानुसार अजायबघर आदि स्थानों मे ले जाना चाहिए। निर्धनों को शिक्षा देते समय संगीत, छपाई, चित्रकला, बागवानी आदि भी सिखलाए जाने चाहिए। यदि ऐसा न हुआ तो प्राथमिक शिक्षा एकदम व्यर्थ

है। वस्तुओं का ज्ञान ही अधिक आवश्यक है, पाठ कंठस्थ करना नहीं।

—श्री हरिचरण बागची के नाम पत्र (१६२६)

प्राथमिक शिक्षा और उच्च शिक्षा में एक महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि प्राथमिक शिक्षा में नवीन तथ्य सिखाने का प्रयत्न आवश्यक है। उच्च शिक्षा में नवीन तथ्य सिखाने के साथ ही तर्क-शक्ति का विकास भी होना आवश्यक है।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१६२६)

मैंने यह अनुभव कर लिया है कि अध्ययन ही विद्यार्थी के लिए अन्तिम लक्ष्य नहीं है। विद्यार्थियों का प्रायः यह विचार होता है कि अगर उन पर विश्वविद्यालय का ठप्पा लग गया तो उन्होंने जीवन का चरम लक्ष्य पा लिया। लेकिन अगर किसी को ऐसा ठप्पा लगने के बाद भी वास्तविक ज्ञान नहीं प्राप्त हुआ तो ? मुझे कहने दीजिए कि मुझे ऐसी शिक्षा से घृणा है। क्या इससे कहीं अधिक अच्छा यह नहीं है कि हम अशिक्षित रह जाएं ?

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

शिक्षा का उद्देश्य है बुद्धि को कुशाग्र बनाना और विवेक-शक्ति को विकसित करना। यदि ये दोनों उद्देश्य पूर्ण हो जाते है तो यह मानना चाहिए कि शिक्षा का लक्ष्य पूरा हो गया है। यदि कोई पढ़ा-लिखा व्यक्ति चरित्रवान नहीं है तो क्या मैं उसे पण्डित कहूंगा ? कभी नहीं। और यदि एक अनपढ़ व्यक्ति ईमानदारी से काम करता है, ईश्वर में विश्वास रखता है और उससे प्रेम करता है तो मैं उसे महा पण्डित मानने को तैयार हूं। कोई व्यक्ति कुछ बातें रट-रटाकर ही विद्वान् नहीं बन जाता।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

शिक्षा-पद्धति

यदि कोई शिक्षा-प्रणाली भारतीय परिस्थितियों, भारतीय आवश्यकताओं और भारतीय इतिहास तथा सामाजिकता की उपेक्षा करती है तो वह इतनी अवैज्ञानिक होगी कि उसे कोई भी युक्तिसंगत समर्थन नहीं दिया जा सकता। पूर्व और पश्चिम के बीच सांस्कृतिक समन्वय के प्रति उचित मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण यह नहीं होगा कि भारतीय बच्चों पर कच्ची उम्र पर अंग्रेजी शिक्षा लाद दी जाए, बल्कि यह होगा कि जब वे विकसित हो जाएं तो उन्हें पश्चिम के निकट वैयक्तिक सम्पर्क में लाया जाए, जिससे वे स्वयं यह निर्णय कर सकें कि पूर्व में और पश्चिम में क्या अच्छा है और क्या नहीं है।

—आत्मकथा, अध्याय ४

शिल्प-कला

अर्थ-नीति के अनुसार मनुष्य के सब काम उत्पादक होते हैं या अनुत्पादक। कौनसा काम शास्त्र के अनुसार उत्पादक है और कौनसा अनुत्पादक इस बात को लेकर बहुत तर्क-वितर्क किया जाता है। मैं तो शिल्प-कला को या तत्सम्बन्धी अन्य किसी क्रिया को अनुत्पादक नहीं मानता, और दार्शनिक चिन्तन या तत्त्व जिज्ञासा को निष्फल या निरर्थक मानकर उसकी उपेक्षा भी नहीं करता।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

शिल्प-शिक्षा

केवल मानसिक शिक्षा न देकर शिल्प-शिक्षा की व्यवस्था भी साथ-साथ करनी चाहिए। पुतला बनाना, मिट्टी से मानचित्र बनाना, फोटो खींचना, रंग का प्रयोग, गाना सीखना, इन

सबकी व्यवस्था करनी चाहिए। इससे न केवल सर्वांगीण शिक्षा मिलेगी अपितु साथ-ही-साथ लिखने-पढ़ने की भी विशेष उन्नति होगी। कई प्रकार की विद्या सीखने से लड़कों की बुद्धि बढ़ती है, लिखने-पढ़ने में मन लगता है। लिखने-पढ़ने का नाम सुनकर भय नहीं लगता। विभिन्न वस्तुएं न दिखाकर केवल रटाते हुए लिखाई-पढ़ाई सिखाना प्रारम्भ कर देने से तो उस लिखाई-पढ़ाई में आनन्द नहीं आता। बच्चा लिखाई-पढ़ाई से भयभीत हो जाता है और उसकी बुद्धि का विकास नहीं होता।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१६२६)

शूद्र

शूद्र अथवा भारत के अछूत कहे जाने वाले लोग मजदूर दल के संघटक हैं। अभी तक इन लोगों को केवल प्रतारणा ही मिली है। उनकी शक्ति और उनका उत्सर्ग भारत को प्रगति को सम्भव बनाएगा।

—मित्र चारुचन्द्र गांगुली को पत्र (कैम्ब्रिज, २३-३-१६२०)

श्रद्धा

मुझे केवल श्रद्धा चाहिए। तर्क से अतीत श्रद्धा—यह श्रद्धा कि भगवान का अस्तित्व है। इसके अतिरिक्त मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। श्रद्धा से मुझमें भक्ति जाग्रत होगी और भक्ति से ज्ञान मुझे स्वतः प्राप्त होगा। महान् ऋषियों ने कहा है कि श्रद्धा से ही ज्ञान-प्राप्ति का मार्ग खुलता है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

श्रद्धा का अभाव ही सभी प्रकार के दुर्भाग्य और दुःख की जड़ है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

संगीत

जिसके हृदय में आनन्द नहीं है, संगीत से जिसका हृदय तरंगित नहीं होता, क्या वह व्यक्ति जगत् में कोई महान् कार्य कर सकता है ?

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

मेरे विचार से जिस व्यक्ति के हृदय में संगीत का स्पन्दन नहीं है, वह चिन्तन और कर्म द्वारा कदापि महान् नहीं बन सकता। हम चाहते हैं कि हमारे रक्त में आनन्दानुभूति का संचार हो। इसका कारण यह है कि आनन्द की पूर्णता से ही हम सृष्टि कर सकते है, संगीत के समान आनन्द भला और कौन दे सकता है ?

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

संघर्ष

आजादी का अन्तिम संघर्ष लम्बा और मुश्किल होगा और हमें तब तक लड़ते ही रहना होगा जब तक कि भारत पर कब्जा रखने वाले सभी अंग्रेजों को हम काराग्रस्त या निकाल बाहर न कर दें।

—बैंकाक से प्रसारण, (२-१०-१९४३)

हम संघर्षों और उनके समाधानों द्वारा ही आगे बढ़ते हैं।

—आत्मकथा, अध्याय १०

संतुलन

हमारे यहां की जलवायु में कुछ ऐसी कमी है कि हम मिताचार और अत्युत्साह में संतुलन स्थापित नही कर पाते। जहां उत्साह है वहां मिताचार नहीं है और जहां मिताचार है वहां उत्साह या स्फूर्ति नहीं है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (४-२-१९२०)

हमारे देश में यह जीवन-प्रणाली का ही दोष है कि जो काम नहीं करना चाहते वे कुछ भी नहीं करते और जो करना चाहते हैं वे आवश्यकता से अधिक काम करने लगते हैं और एक ही दिन में सब कुछ उपलब्ध कर लेने के फेर में अपना स्वास्थ्य और सब कुछ गंवा बैठते हैं।

—*मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-१-१६२०)*

संदेश

भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम के लिए जन, धन और रसद देकर आपने देशभक्ति और त्याग का जाज्वल्यमान उदाहरण प्रस्तुत किया है। पूर्ण लामबन्दी के मेरे आह्वान के जवाब में आपने उदारता और उत्साह का जैसा प्रदर्शन किया है उसे मैं कभी नहीं भूल सकता। आपने अपने लड़के-लड़कियों को एक बारहमासी जलधारा के रूप में आजाद हिन्द फौज और रानी झांसी रेजीमेंट में भेजा। उदार होकर आपने आजाद हिन्द फौज की आरजी सरकार के युद्ध-कोष के लिए नकदी और माल चंदे में दिया। संक्षेप में आपने भारत के असली पुत्र-पुत्रियों का *कर्त्तव्य निभाया है। आपके कष्ट-सहन और बलिदान का तुरन्त* कोई परिणाम नहीं निकला, यह सच है और आपसे भी अधिक इस बात का मुझे दु:ख है।

फिर भी विश्वास रखिए कि ये व्यर्थ नहीं गए; क्योंकि *उन्होंने हमारी मातृभूमि की स्वतन्त्रता का पथ प्रशस्त कर दिया* है और वे सारे संसार में बसे भारतीयों के लिए सदा-सर्वदा प्रेरणा के स्रोत रहेंगे। भविष्य आपको आशीर्वाद देगा और भारतीय स्वतन्त्रता की वेदी पर आपने जो बलिदान किए और जो ठोस उपलब्धियां प्राप्त की उन्हें गौरव के साथ बखाना जाएगा।

—पूर्व एशिया के भारतीयों को संदेश (१७-८-१९४५)

सम्बन्ध

मनुष्य कोई सम्बन्ध मान ले तो साथ-साथ कई कर्त्तव्य भी उसके सिर पर आ जाते हैं। और उनको पूर्ण न करने से अन्याय होता है।

—पत्रावली, पृ० २४५-४६

संयम

नि:संदेह बचपन और युवावस्था में पवित्रता और संयम बहुत आवश्यक है।

—आत्मकथा, अध्याय ६

सच्चाई और ईमानदारी

जब तक मैं सच्चाई और ईमानदारी को नहीं छोड़ता तब तक मैं गलत मार्ग पर जा ही नहीं सकता। यह सम्भव है कि सत्य की ओर मेरी प्रगति सीधी न होकर टेढ़ी-मेढ़ी हो। आखिर जीवन का प्रयाण सीधे थोड़े ही होता है। पूरा सीधापन तो केवल एक सीधी रेखा में ही हो सकता है।

—पत्रावली, पृ० २८५

सच्चा क्रान्तिकारी

एक सच्चा क्रान्तिकारी वह है जो कभी हार नहीं मानता; जो कभी अवनत या हताश अनुभव नहीं करता। एक सच्चा क्रान्तिकारी अपने उद्देश्य के औचित्य में विश्वास करता है और आश्वस्त होता है कि अंततोगत्वा उसका उद्देश्य सफल होकर रहेगा।

—सिंगापुर से प्रसारण (२४-७-१९४५)

सच्चा ज्ञान

सच्चा ज्ञान तो भगवान के दर्शन से ही होता है। शेष जो कुछ है वह ज्ञान नहीं है। मैं विद्वान् या पण्डित व्यक्तियों को

आसमान पर नहीं चढ़ाना चाहता। मैं ऐसे व्यक्ति की पूजा करता हूं जिसका हृदय ईश्वर के प्रेम से सराबोर है। अगर ऐसा व्यक्ति नीची जाति का भी हो तो मैं उसकी चरण-धूलि लेने को तैयार हूं, क्योंकि मेरे लिए उसकी चरण-धूलि बड़ी पवित्र वस्तु है। और जिस व्यक्ति में दुर्गा या हरि जैसे भगवान के नाम के उच्चारण को सुनते ही हर्ष के हिलोरे उठने लगते हैं, शरीर रोमांचित होने लगता है, वह तो निस्संदेह स्वयं भगवान है।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

सत्य

क्या मनुष्य के लिए निरपेक्ष सत्य की अनुभूति कर पाना असम्भव है? प्रत्येक व्यक्ति किसी एक सापेक्ष सत्य को अपने जीवन का निरपेक्ष सत्य बना लेता है और फिर उसी पैमाने से इस जीवन की अच्छाई और बुराई तथा सुख-दुःख को नापता है। किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि वह किसी दूसरे के जीवन-दर्शन में हस्तक्षेप करे या उसके विरुद्ध कोई बात कहे। लेकिन यह तभी सम्भव है जब उस जीवन-दर्शन का आधार सच्चाई और सदाशयता हो।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

सत्य की उपेक्षा हम नहीं कर सकते। हमें उसकी प्रकृति जानने का प्रयास करना ही होगा यद्यपि, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, सत्य का यह ज्ञान अधिक से अधिक सापेक्ष ही हो सकता है और उसे निरपेक्ष सत्य की दार्शनिक संज्ञा नहीं दी जा सकती। इस सापेक्ष सत्य को ही हमारे जीवन का आधार बनना चाहिए, भले ही आज का सापेक्ष सत्य कल बदल जाने वाला हो।

—आत्मकथा, अध्याय १०

सत्य वास्तव में इतना विशाल है कि हमारी छोटी-सी कमजोर बुद्धि उसे पूरी तरह नही आवद्ध कर पाती। फिर भी हमें अपने जीवन का निर्माण उस सिद्धांत को लेकर करना है जिसमें अधिकतम सत्य है। हम यह सोचकर निष्क्रिय नहीं बैठ सकते कि हम निरपेक्ष सत्य को नहीं जानते अथवा नही जान सकते।

—आत्मकथा, अध्याय १०

सत्याग्रह

सत्याग्रह, जैसा कि मैं इसे समझता हूं मात्र निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं है वरन् सक्रिय प्रतिरोध भी है, यद्यपि यह क्रियाशीलता अहिंसक प्रकृति की होनी चाहिए।

—हरिपुरा कांग्रेस में अध्यक्षीय भाषण (१६-२-१६३८)

सनक

जिस व्यक्ति में सनक नहीं होती, वह कभी महान् नहीं हो सकता। लेकिन सभी सनकी व्यक्ति महान् नहीं वन जाते। सभी पागल व्यक्ति प्रतिभाशाली नहीं बन जाते। आखिर क्यों? कारण यह है कि केवल पागलपन यथेष्ट नहीं है। कुछ और भी आवश्यक है। अगर तुम्हारी सनक का परिणाम यह होता है कि तुम आत्म-नियंत्रण खो बैठते हो, तो तुम्हें, अपनी जिज्ञासा का कोई भी समाधान प्राप्त नहीं हो सकता।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-६-१६१५)

समझौता

अपने पिछले अनुभव के कारण मैं बहुत तीव्रता से महसूस करता हूं कि समझौता-परस्ती बड़ी अपवित्र है। यदि मैं १६१६ में जेम्स के सम्मुख सर ऊंचा करके खड़ा होता और स्वीकार कर लेता कि मैंने ओटेन पर हमला किया है तो मैं एक बेहतर तथा अधिक सच्चा इंसान सिद्ध होता और विद्यार्थी सम्प्रदाय

के उद्देश्यों को अधिक अच्छी तरह से पूर्ति कर सकता, हालांकि स्वयं मुझे प्रतिकूल परिणाम झेलने होते।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२५-४-१९२१)

मेरा यह विश्वास बन गया है कि समझौता एक बुरी चीज है जो मनुष्य को सम्मान से च्युत करता है और उसके आदर्श को क्षति पहुंचाता है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-४-१९२१)

हमें एक राष्ट्र का निर्माण करना है और राष्ट्र का निर्माण तभी संभव हो सकता है जब हम हैम्पडन और क्रामवेल जैसे व्यक्तियों के समझौता-विरोधी आशीर्वाद से प्रेरित हों।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (२३-४-१९२१)

समर्पण

मनुष्य-जीवन जन्म और मृत्यु का अनन्त चक्र है और उसका सार यह है कि हम हरि के प्रति समर्पित हो सकें। इस समर्पण के बिना जीवन का कोई अर्थ नहीं है। हममें और पशुओं में यही अन्तर है कि पशु न भगवान के अस्तित्व का अनुमान कर सकते हैं और न उसकी प्रार्थना कर सकते हैं। जबकि हम अगर चाहें तो वैसा कर सकते हैं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

वह व्यक्ति धन्य है जिसने अपने इसी जीवन में अपने आपको बिना किसी शर्त के भगवान के हाथों में सौंप दिया है। उसे ही पूर्णता प्राप्त होती है और इस संसार में आकर उसका जीवन सार्थक बनता है। लेकिन कितने दु:ख की बात है कि हम इस महान् सत्य को स्वीकार नहीं करते। हम इतने अन्धे, इतने अविश्वासी और अज्ञानी हैं कि इस सत्य का अनुभव नहीं कर पाते। हम वास्तव में मनुष्य कहलाने योग्य नहीं हैं। हम तो

इस पापपूर्ण युग में राक्षसों के समान हैं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

समाजवाद

मेरे मन में किसी प्रकार संदेह नहीं है कि हमारी मुख्य राष्ट्रीय समस्याएं जो गरीबी, अशिक्षा और बीमारी के उन्मूलन से एवं वैज्ञानिक उत्पादन और वितरण से संबंधित है, समाजवादी आधार पर ही प्रभावशाली ढंग से सुलझाई जा सकती हैं।

—हरिपुरा कांग्रेस में अध्यक्षीय भाषण (१९-२-३८)

मेरे मस्तिष्क में कोई संदेह नहीं है कि संसार की तरह भारत का परित्राण समाजवाद पर निर्भर है। भारत को दूसरे राष्ट्रों के अनुभव से सीखना चाहिए और लाभ उठाना चाहिए किन्तु भारत को अपनी आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुकूल अपनी कार्य-प्रणाली विकसित करने में भी समर्थ होना चाहिए। किसी सिद्धान्त को व्यवहार में लाते समय आप इतिहास और भूगोल को असगत घोषित नहीं कर सकते। अगर आप ऐसा करते हैं तो असफल ही होंगे। इसलिए भारत को समाजवाद के अपने प्रकार को विकसित करना चाहिए। जबकि सारा जगत् समाजवादी प्रयोगों में व्यस्त है, हम भी ऐसा क्यों नहीं कर सकते।

समाजवाद के उस प्रकार में, जो भारत विकसित करेगा, कुछ नया और मौलिक होगा, जो सम्पूर्ण विश्व के लिए लाभदायक भी होगा।

—आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस में अध्यक्षीय भाषण
(कलकत्ता ४-७-१९३१)

समाजवाद की नयी धारणाएं पश्चिम से भारत की ओर गतिशील हो रही हैं और वे अनेक व्यक्तियों के विचारों को

आंदोलित कर रही हैं, किन्तु समाजवाद की धारणा इस देश के लिए कोई नई बात नहीं है। हम इसे इसलिए आदर दे रहे हैं, क्योंकि हमने अपने इतिहास के सूत्र को खो दिया है। किसी भी विचारधारा को त्रुटिरहित और पूर्णतः सही मानना उचित नहीं है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि कार्ल मार्क्स के मुख्य अनुयायी रूस ने भी इस विचारधारा का अंधानुकरण नहीं किया। अपने सिद्धांतों पर लागू करने में कठिनाई देखकर उन्होंने ऐसी आर्थिक नीति ग्रहण की जो व्यक्तिगत संपत्ति और व्यापारिक कारखानों के स्वामित्व के अधिग्रहण की विरोधी नहीं थी। इसलिए हमें अपने आदर्शों और अपनी आवश्यकताओं के अनुसार समाज और राजनीति को आकार देना चाहिए। प्रत्येक भारतीय का यही उद्देश्य होना चाहिए।

—रंगपुर राजनैतिक सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण (३०-३-१६२६)

समाजवादी गणतंत्र

मैं भारत में समाजवादी गणतंत्र चाहता हूं। मुझे पूर्ण, समग्र और अमंद स्वतंत्रता का संदेश देना है। जब तक कि आधारभूत या क्रांतिकारी तत्त्वों को आंदोलित नहीं किया जाता तब तक हम स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकते, और हृदय से आकर सीधे हृदय तक पहुंचने वाले एक नये संदेश द्वारा प्रेरित किए बिना उन क्रांतिकारी तत्त्वों को अपने बीच उत्तेजित नहीं कर सकते।

—आल इंडिया नौजवान भारत सभा, कराची में अध्यक्षीय भाषण (२७-३-१६३१)

समान अवसर

यदि हम भारत को वास्तव में महान् बनाना चाहते हैं, तो हमें प्रजातांत्रिक समाज के आधार पर राजनीतिक प्रजातंत्र को

स्थापना करनी होगी। जन्म, जाति और सम्प्रदाय पर आधारित विशेष सुविधाएं समाप्त होनी चाहिए तथा जाति, मत एवं धर्म से निरपेक्ष होकर सबको समान अवसर दिए जाने चाहिए।

—महाराष्ट्र प्रांतीय कान्फ्रेंस पूना के अध्यक्षीय पद से भाषण (३ मई, १९२८)

सम्मान

मेरे लिए मेरे जीवन का बहुत मूल्य है, परन्तु सम्मान मुझे उससे भी अधिक प्रिय है। अतः मैं अपने जीवन के लिए उन पवित्र और अलंध्य अधिकारों का, जो भविष्य में भारत के राजनीतिक निकाय का आधार होंगे, सौदा नहीं कर सकता।

—पत्रावली, पृ० २३७

सर्वस्व बलिदान करो

एक भारतीय के रूप में मैं सदैव हिन्दुस्तान की आजादी के लिए लड़ता रहा हूं। मैं उम्मीद करता हूं कि सारे भारतीयों को, चाहे वे कहीं भी हों, भारत की मुक्ति के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देना चाहिए।—प्रत्येक भारतीय को साहस के साथ लड़ना चाहिए। भारत के प्रत्येक पुत्र को इस दृढ़ विश्वास के साथ लड़ना चाहिए कि हमारे पूर्वजों की धरती की मुक्ति का दिन करीब है।

—आजाद हिन्द रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२३-४-१९४२)

सविनय अवज्ञा आन्दोलन

स्वतंत्रता के संघर्ष के विकास की दिशा में भारत ने एक नया प्रयोग आजमाया—सविनय अवज्ञा अहिंसात्मक विरोध—जिसके सर्वोत्तम प्रवर्तक महात्मा गांधी थे। यद्यपि व्यक्तिगत रूप से मेरा यह विश्वास है कि यह पद्धति हमको पूर्ण स्वाधीनता दिलाने में सफल नहीं होगी फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं है

कि इसने भारतीय जनता को जाग्रत संगठित करने और विदेशी सरकार के विरुद्ध प्रतिरोधात्मक आंदोलन को जारी रखने में भी सहायता दी है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १९४४)

सहिष्णुता

व्यापकतर सहिष्णुता के लिए हमेशा गुंजाइश होनी चाहिए।

—आत्मकथा, अध्याय १०

सांप्रदायिक सद्भाव

विभिन्न धार्मिकसमूहों का एक-दूसरे की परम्पराओं, आदर्शों और इतिहास से परिचित होना आवश्यक है, क्योंकि सांस्कृतिक आत्मीयता से सांप्रदायिक शांति और समन्वय का मार्ग प्रशस्त होगा। मेरा तो यह भी विचार है कि सांस्कृतिक समन्वय ही विभिन्न समुदायों में एकता का मूल आधार है।

—महाराष्ट्र प्रान्तीय कान्फ्रेंस पूना के अध्यक्षीय पद से भाषण (३ मई, १९२८)

सांप्रदायिक समस्या

मुझे पूरा यकीन है कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या ऐसी नहीं है, जिनका समाधान न हो सके। किन्तु इसका समाधान तभी होगा, जब हम व्यावहारिक और ठोस मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करें और उन मुद्दों पर अपना समय और शक्ति बर्बाद न करें जो स्वरूप में सैद्धान्तिक अथवा अमूर्त हैं। हिन्दू और मुस्लिमों के बीच सहयोग की भावना जहां कहीं भी तुरंत संभव है, भावी सहयोग के क्षेत्र को अनिवार्य रूप से विस्तृत करेगी।

—क्रास रोड्स, पृ० ३४२

साधन

तुम्हारे पास जो भी साधन हैं, उनको लेकर तुम एक दार्शनिक सिद्धांत का निर्माण करो, जिससे तुम अपने जीवन की समस्त वर्तमान गतिविधियों को समन्वित कर सको। फिर उस दर्शन के अनुसार आगे बढ़ो।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९-९-१९१५)

साधना

साधना का लक्ष्य है एक ओर तो वासनाओं का नाश करना और दूसरी ओर सद्वृत्तियों का विकास करना। वासनाओं के नष्ट होते ही दिव्य भावों से हृदय परिपूर्ण हो जाएगा और हृदय में दिव्य भावों के प्रवेश करते ही समस्त दुर्बलताएं भाग जाएंगी।

—श्री हरिचरण वागची को पत्र (१९२६)

साधना की स्थिति में मनुष्य को ऐसा जीवन व्यतीत करना पड़ सकता है कि वह वाहर से स्वार्थी दिखाई दे। परन्तु उस दशा में मनुष्य विवेक-बुद्धि से प्रेरित होता है, अन्य लोगों के विचारों से नहीं। जब साधना का परिणाम सामने आता है, तभी लोग स्थायी रूप से उस पर विचार करते हैं। इस आधार पर यदि आत्म-विकास के वास्तविक मार्ग को ग्रहण किया जाता है तो लोकमत की उपेक्षा की जा सकती है।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (९-१०-१९२५)

सामाजिक परिवेश

मुझे इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं दिखाई देता कि हम जिस घरेलू और सामाजिक परिवेश में जन्मे हैं, उसका पूरा फायदा उठाएं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९१७)

सामान्य व्यक्ति

सामान्य व्यक्ति में वह आदर्शवाद नहीं होता, जिससे प्रेरित होकर वह किसी ऐसे जीवन की कल्पना कर सके, जो सामान्यतः जिए जाने वाले जीवन से भिन्न हो।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (१६-२-१६२१)

साम्यवाद

साम्यवाद में जो कमी है, वह यह है कि यह राष्ट्रीय भावनाओं का मूल्य नहीं समझता। भारत में हम एक प्रगतिशील व्यवस्था को अपनाना चाहेंगे, जो समस्त जनता की सामाजिक आवश्यकताओं को फलीभूत करेगी और राष्ट्रीय भावना पर आधारित होगी। दूसरे शब्दों में यह राष्ट्रवादिता और समाजवाद का समन्वित रूप होगा।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १६४४)

साम्राज्यवाद

प्रत्येक साम्राज्य फूट डालो और राज्य करो की नीति पर आधारित होता है; किन्तु मुझे संदेह है कि विश्व में किसी दूसरे साम्राज्य ने इस नीति को इतनी कार्यकुशलता, क्रमबद्धता और और निष्ठुरता से न अपनाया होगा जितना कि ग्रेट ब्रिटेन ने।

—हरिपुरा कांग्रेस मे अध्यक्षीय भाषण (१६-२-१६३८)

साम्राज्यवादी

एक पुराना साम्राज्यवादी मस्तिष्क सदैव लीक में काम करता है। उसे कभी नया मार्ग नहीं सूझता। यही कारण है कि जब एक बार साम्राज्यवाद का अपक्षय होने लगता है तो इसके पतन को रोकना मुश्किल हो जाता है। लोगों को यहां आस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्य का स्मरण होगा, जो विश्वयुद्ध की समाप्ति पर ताश के पत्तों से बने मकान की तरह ढह गया।

—क्रास रोड्स, पृ० ३०५

सिद्धान्त

मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि हमारे सामूहिक जीवन के आधार का निर्माण करने वाले सिद्धान्त न्याय, समानता, स्वतंत्रता अनुशासन और प्रेम हैं। इसलिए, समानता को निरापद करने के लिए हमें सभी प्रकार के बंधन—सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक—छोड़ देने चाहिए और हमें पूर्णतया स्वतंत्र हो जाना चाहिए।

—आल इंडिया नौजवान भारत सभा, करांची में अध्यक्षीय भाषण (२७-३-१९३१)

सुख और शान्ति

यदि हृदय में सुख और शान्ति नहीं है तो किसी भी दशा में (बाह्य अभाव दूर हो जाने पर भी) मनुष्य सुखी नहीं रह सकता।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२६)

सेना

जिस फौज की साहस, निडरता और अजेयता की परम्परा न हो वह ताकतवर दुश्मन पर हावी नहीं हो सकती।

—आजाद हिंद फौज के सैनिक-निरीक्षण पर दिया गया भाषण (५-७-१९४३)

सेवा

अपने पास जो उत्कृष्टतम वस्तु हो उसका दान देना ही सच्ची सेवा है। हमारी अन्तःप्रकृति, हमारा धर्म जब सार्थकता प्राप्त कर सके तभी हम वास्तविक सेवा के अधिकारी बनते हैं।

—श्री दिलीपकुमार राय को पत्र (९-१०-१९२५)

मेरी प्रभु से प्रार्थना है कि मैं सम्पूर्ण जीवन दूसरों की सहायता में बिता सकूं।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १९१२-१३)

हमें चौरासी योनियों में भटकने के बाद यह मनुष्य जीवन मिला है। हमें बुद्धि, चेतना, आत्मा जैसे गुण मिले हैं, लेकिन अगर इन सबके होते हुए भी हम पशुओं के समान खाने और सोने से ही संतुष्ट रहें; अगर हम अपनी इन्द्रियों के दास बने रहें; अगर हम केवल अपनी चिन्ता करें और पशुओं के समान नैतिकता से शून्य जीवन जिएं तो मनुष्य के रूप में हमारे जन्म लेने की क्या सार्थकता है ? केवल वही जीवन जीने योग्य है जो दूसरों की सेवा के लिए समर्पित हो।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (सन् १६१२-१३)

सेवा-कार्य

जब तक गांव में दूसरों के दु:ख के प्रति समवेदना और सहानुभूति नहीं जगती तब तक सेवा-कार्य सम्भव नही हो सकता। सम्भव होने पर भी वह सार्थक नहीं हो सकता।

—श्री दिलीपकुमार राय के नाम पत्र (६-१०-१६२५)

सैनिक

एक सच्चे सैनिक को सैन्य और आध्यात्मिक दोनों प्रशिक्षणों की जरूरत होती है। आप सबको स्वयं और अपने साथियों को इस प्रकार प्रशिक्षित कर लेना चाहिए कि हर एक सैनिक अपने आप में असीम विश्वास पैदा कर ले। उसमें ऐसी चेतना आ जाए कि वह दुश्मन से कही श्रेष्ठ है। मृत्यु से भय चला जाए और आवश्यकता पड़ने पर किसी भी संकटकाल में वह अपनी जान की बाजी लगाने तक प्रयत्नशील रहे। इस युद्ध के दौरान आपने खुद ही देखा होगा कि साहस, निडरता और गतिशीलता के संयोग से वैज्ञानिक प्रशिक्षण कितना चमत्कार पैदा कर देता है। इस उदाहरण से आप अधिक से अधिक जो

भी शिक्षा ले सकते हों, लें, और भारतमाता के लिए उच्च कोटि की आधुनिक सेना तैयार करें।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१९४३)

सैनिक होने के नाते आपको निष्ठा, कर्त्तव्य और बलिदान के तीन आदर्शों को संजोए रखना होगा और उनका पालन करना होगा। जो सैनिक देशभक्त होते हैं और प्राणोत्सर्ग के लिए सदा तत्पर रहते हैं, वे अजेय होते है। अगर आप भी अजेय होना चाहते हैं तो इन तीन आदर्शों को हृदय के अन्दर अंकित कर लें।

—दिल्ली चलो, दिल्ली चलो (५-७-१९४३)

सैनिक शक्ति

अगर भारत को एक आधुनिक, सभ्य राष्ट्र होना है तो उसे इसकी कीमत चुकानी होगी और वह किसी भी प्रकार भौतिक, यानी सैनिक, समस्या से बच नहीं सकता। जो लोग देशोद्धार के काम में लगे हुए हैं उन्हें नागरिक और सैनिक—दोनों ही प्रकार के प्रशासन का भार ग्रहण करने के लिए तैयार रहना होगा। राजनैतिक स्वाधीनता अविभाज्य है और उसका अर्थ है विदेशी नियन्त्रण और स्वामित्व से सम्पूर्ण मुक्ति। विश्व युद्ध ने दिखा दिया है कि अगर किसी राष्ट्र के पास सैनिक शक्ति नहीं है तो वह अपनी स्वाधीनता कायम रखने की आशा नहीं कर सकता।

—आत्मकथा, अध्याय ७

सैनिकों से

आज आप भारत के राष्ट्रीय गौरव के संरक्षक हैं और भारत की आशाओं और अभिलाषाओं के सजीव रूप हैं। इस-लिए आप अपना व्यवहार ऐसा बनाइए कि आपके देशवासी

आपको आशीर्वाद दें और भावी पीढ़ियां आप पर गर्व करें।

—आजाद हिंद फौज के सैनिक-निरीक्षण पर दिया गया भाषण
(५-७-१९४३)

स्वतन्त्रता

मानवीय स्वतन्त्रता की धारणा अब बदल गई है। प्राचीन काल में भारतीयों के लिए स्वतन्त्रता का अर्थ था आध्यात्मिक स्वतन्त्रता, त्याग, वासना, लालसा आदि से मुक्ति। लेकिन इस स्वतन्त्रता के अन्तर्गत राजनैतिक और सामाजिक बंधनों से मुक्ति भी शामिल थी।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-६-१९१५)

मेरा दृढ़ विश्वास है कि ब्रिटिश नृशंसता का शस्त्रबल से विरोध करने पर ही भारत मां को आजाद किया जा सकता है और अपना रक्त बहाए बिना भारतीय भारत को मुक्त नहीं कर सकते। अपना रक्त बहाए बिना प्राप्त की गई स्वतंत्रता वास्तविक स्वतंत्रता नहीं होगी। हमने अपने शत्रु ब्रिटेन से अपनी पूर्ण शक्ति के साथ लड़ने का दृढ़ निश्चय किया है।

—इंपीरियल कंसरवेटिव पॉलिटिकल कौंसिल टोकियो में भाषण
(२३-६-१९४३)

स्वतन्त्रता अनिवार्य

हमारे शासकों और हमारे स्वयं नियुक्त सलाहकारों की प्रतिदिन यह भाषण देने की आदत बन गई है कि हम स्वराज्य के लिए अयोग्य हैं। कुछ कहते हैं कि स्वतन्त्र हो सकने से पहले हमें और अधिक शिक्षित होना चाहिए। दूसरे विचार प्रकट करते हैं कि सामाजिक सुधारों को राजनैतिक सुधारों के आगे-आगे चलना चाहिए; फिर अन्य तर्क देते हैं कि औद्योगिक विकास के बिना भारत स्वराज्य के योग्य नहीं हो सकता। इन वक्तव्यों में

से कोई भी सत्य नहीं है। वस्तुतः यह कहना अधिक ठीक होगा कि राजनीतिक स्वतन्त्र ा के बिना, ऐसी शक्ति के बिना, जिससे हम अपने भाग्य को रूप दे सकें—न तो हम अनिवार्य नि.शुल्क शिक्षा दे सकते है, न सामाजिक सुधार अथवा औद्योगिक विकास कर सकते हैं।

—महाराष्ट्र प्रान्तीय कान्फ्रेंस पूना में अध्यक्षीय भाषण (३-५-१९२८)

स्वतन्त्रता-आन्दोलन

आधुनिक भारत की मुक्त आत्मा अपने को क्रियाशीलता में व्यक्त करना चाहती थी परन्तु एक ओर राज्य के द्वारा और दूसरी ओर समाज के द्वारा स्वयं को शृंखलाओं में आबद्ध पाती थी तब भारतीय लोगों की राजनैतिक और सामाजिक मुक्ति के लिए आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इस आन्दोलन के लिए भी हमारी धरती उतनी ही उपजाऊ थी, जितनी कि आन्दोलन आधुनिक भारत के नवनिर्माण और पुनर्जागरण के लिए।

—क्रास रोड्स, पृ० २०२

स्वतन्त्रता का अधिकार

मैं केवल यही कहना चाहूंगा कि भारत की जागी हुई जनता स्वयं सहायता और आत्मनिर्भरता के तरीके को, जन-संगठन और जन-संघर्ष के तरीके को, जिसने उसको सफलता प्रदान की है और जो कि उसको और भी सफलता की ओर ले जाएगा, नहीं छोड़ सकती। और इससे भी बढ़कर वह स्वतन्त्रता के अपने जन्मसिद्ध अधिकार को विदेशी साम्राज्यवाद के साथ एक अनैतिक सौदेबाजी के कारण नहीं छोड़ सकती।

—क्रास रोड्स, पृ० २०३

स्वतन्त्रता का अर्थ

स्वतन्त्रता एक ऐसा शब्द है जिसके विभिन्न अभिप्रार्थ हैं

और हमारे देश में भी, स्वतन्त्रता की अवधारणा का तात्पर्य *विकास की प्रक्रिया है। स्वतन्त्रता से मेरा तात्पर्य है सर्वतोमुखी* स्वतन्त्रता—व्यक्ति के अलावा समाज के लिए स्वतन्त्रता, धनी के साथ निर्धन के लिए स्वतन्त्रता, आदमी के साथ महिलाओं के लिए स्वतन्त्रता, सभी वर्गों के लिए स्वतन्त्रता। इस स्वतन्त्रता का तात्पर्य मात्र राजनीतिक बंधनों से मुक्ति नही है वरन् इसका तात्पर्य है *धन का समान बंटवारा, जातिगत अवरोधों और* सामाजिक असमानताओं की समाप्ति, साम्प्रदायिकता और धार्मिक असहिष्णुता का विनाश। यह आदर्श है जो कठोर विचार वाले नर-नारियों के लिए स्वप्नदर्शी प्रतीत हो सकता है किन्तु मात्र यही आदर्श आत्मा की भूख को शान्त कर सकता है।

—स्टूडेंट कान्फ्रेंस लाहौर मे अध्यक्षीय भाषण (१९-१०-१९२९)

स्वतन्त्रता का प्रयत्न

एकमात्र कारण कि मैं भारत की स्वतन्त्रता के लिए क्यों प्रयत्नशील हूं और क्यों यह विश्वास करता हूं कि स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में *हमारा भविष्य गौरवशाली होगा, यह है कि मैं यह* विश्वास करता हूं कि स्वतन्त्र व्यक्तियों के रूप में जीवित रहने की, राष्ट्र के रूप में विकास करने की हमारे भीतर पर्याप्त कार्य-शक्ति शेष है।

—टोकियो विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधन (नवम्बर, १९४४)

स्वप्न

जिन स्वप्नों से छुटकारा पाना सबसे कठिन होता है, वे सैक्स सम्बन्धी होते हैं। इसका कारण यह है कि काम-वासना मनुष्य की एक सबसे अधिक सशक्त वृत्ति होती है, और कामोत्तेजना कुछ निश्चित अवधियों में फिर-फिर लौटती है, अतः

तत्सम्बन्धी स्वप्न भी समय-समय पर आते रहते हैं। फिर भी, उनसे कम-से-कम आंशिक छुटकारा पाना अवश्य सम्भव होता है। कम-से-कम मेरा तो यही अनुभव रहा है। इसका तरीका यह है कि मन के पर्दे पर उस दृश्य की कल्पना की जाए जो उत्तेजना पैदा करता हो, और अपने आपसे बार-बार कहा जाए कि उससे अब मुझे कोई उत्तेजना अनुभव नहीं होती, और यह कि अब मैंने काम-वासना पर विजय प्राप्त कर ली है।

—आत्मकथा, अध्याय ८

हमें उन स्वप्नों पर भी विचार करना होगा, जिन्हें देखकर बच्चे प्रायः नींद में चौंक उठते हैं और जिनका प्रभाव उन पर शेष रहता है। स्वप्नों के मनोविज्ञान और संरचना की जानकारी होने से अभिभावक अथवा शिक्षक को शिशु-मन को समझने में सहायता मिलेगी और इससे वे उन अस्वस्थ प्रभावों को दूर कर सकेंगे, जिनसे वह परेशान हो रहा होगा।

—आत्मकथा, अध्याय ५

स्वभाव

भिखारियों का-सा स्वभाव एक दिन में नहीं बदला जा सकता। यदि तुम सोचते हो कि एक दिन में भिखारियों की प्रवृत्ति परिवर्तित की जा सकती है तो तुम्हें निराश ही होना पड़ेगा। समाज-सेवा के लिए बहुत धैर्य रखना पड़ता है।

—श्री हरिचरण बागची के नाम पत्र (३-७-१९२५)

स्वराज्य

जब तक भारतीय जनता संयुक्त होकर दुश्मन का सामना नहीं करती तब तक वह कभी स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकती और यदि पा भी ले तो सुरक्षित नहीं रख सकती।

—गांधी-जन्मदिन पर बैंकाक से प्रसारण (२-१०-१९४३)

स्वातन्त्र्य

अनेक व्यक्ति सोच सकते हैं कि स्वराज्य-युद्ध के हमारे प्रयत्न व्यर्थ चले गए हैं, परन्तु कोई भी उद्देश्यपूर्ण प्रयत्न कभी असफल नहीं होता। गत पच्चीस वर्षों के आन्दोलनों के परिणामस्वरूप हमने आत्मसम्मान और आत्मविश्वास प्राप्त किया है। देश को क्रमशः संगठित किया गया है और धरती पर कोई ताकत नहीं है जो हमें जन्मसिद्ध अधिकार से वंचित कर सके।

—रंगपुर राजनैतिक सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण (३०-३-१९२९)

भारत की आजादी का आखिरी युद्ध शुरू हो गया है। अब आजाद हिन्द फौज की टुकड़ियां भारतीय भूमि पर बहादुरी से लड़ रही हैं, और बावजूद दिक्कतों और दुःखों के धीरे-धीरे लेकिन लगातार आगे बढ़ रही हैं। यह सशस्त्र संघर्ष तब तक चलता रहेगा जब तक कि आखिरी अंग्रेज तक को निकाल बाहर नहीं किया जाता और जब तक कि हमारा तिरंगा राष्ट्रीय झण्डा गर्व से नयी दिल्ली के वायसराय भवन पर नहीं फहराता।

—गांधीजी को सन्देश (६ जुलाई, १९४४)

स्वाधीनता का लक्ष्य

यदि आप दासता की मनोवृत्ति पर विजय प्राप्त करना चाहते है तो आप अपने देशवासियों को पूर्ण स्वराज्य के लिए उत्साहित करके ही ऐसा कर सकते हैं। मैं तो इससे भी आगे बढ़कर कहता हूं कि यदि यह भी मान लिया जाए कि हम अपनी इच्छाओं व आशाओं को कार्यरूप में परिणत नहीं कर पाएंगे तो भी इस पावन सन्देश को ईमानदारी से मात्र प्रसारित करने तथा अपने देशवासियों के सम्मुख स्वाधीनता के लक्ष्य को रखने में हम एक नयी पीढ़ी का सृजन कर सकेंगे।

—कलकत्ता अधिवेशन मे भाषण (दिसम्बर, १९२८)

स्वामी विवेकानन्द

मैं उस समय मुश्किल से पन्द्रह वर्ष का था जब विवेकानन्द ने मेरे जीवन में प्रवेश किया। इसके परिणामस्वरूप मेरे भीतर एक उथल-पुथल मच गई, एक क्रान्ति घटित हुई। स्वामी जी को समझने में तो मुझे काफी समय लगा लेकिन कुछ बातों की छाप मेरे मन में शुरू से हो ऐसी पड़ी कि कभी मिटाए नही मिट सकी। विवेकानन्द अपने चित्रों में और अपने उपदेशों के जरिये मुझे एक पूर्ण विकसित व्यक्तित्व लगे। मैंने उनकी कृतियों में उन अनेक प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर पाए जो मेरे मन में उस समय घुमड़ रहे थे या जो अस्पष्ट थे और बाद में स्पष्ट होकर सामने आए।

—आत्मकथा, अध्याय ५

स्वामी विवेकानन्द ने बंगाल के इतिहास को एक नया मोड़ दिया। उन्होंने बार-बार कहा कि मानव-निर्माण उनके जीवन का लक्ष्य है। मानव-निर्माण के कार्य में स्वामी विवेकानन्द ने अपने अवधान को किसी विशेष सम्प्रदाय के लिए सीमित नहीं किया वरन् सम्पूर्ण समाज को अपनाया। उनकी जोशीली वाणी—'नया भारत कारखानों से तथा झोंपड़ियों और बाजारों से प्रस्फुटित होगा' आज भी बंगाल के प्रत्येक घर में निनादित हो रही है।

—रंगपुर राजनैतिक सम्मेलन (३०-३-१९२९)

स्वास्थ्य

अगर किसी को कुछ स्थायी उपलब्धि करनी है तो उसे उस दिशा में वर्षों तक व्यस्त रहना होगा क्योंकि एक या दो वर्षों में वैसा करना सम्भव नहीं होगा। इसलिए अगर तुम देश के लिए कुछ स्थायी कार्य करना चाहते हो तो तुम्हें इस ढंग से चलना

होगा कि तुममें कई वर्ष तक काम करने की क्षमता बनी रहे। यह सच है कि कोई नहीं कह सकता कि अन्तिम प्रस्थान का क्षण कब आ जाएगा लेकिन फिर भी आत्महनन से या बूते से बाहर काम करके अपना स्वास्थ्य खराब करने से कुछ फायदा नहीं होगा।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-१-१६२०)

बहुत-सी बातें मनुष्य के वश के बाहर हैं लेकिन इसके बावजूद अपने स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा एक अपराध है—न केवल अपने प्रति, बल्कि औरों के तथा अपने देश के प्रति भी। अगर हमारे देश के युवक जन आरम्भिक अवस्था में ही अपना स्वास्थ्य गंवा दें तो कहना पड़ेगा कि उनके आदर्श में कहीं कुछ भूल या छोटापन है। तुम्हारा शरीर तुम्हारा अपना नहीं है, तुम तो केवल उसके न्यासी हो।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२१-१-१६२०)

स्वास्थ्य के नियम

आत्मा में भी यह क्षमता नहीं है कि वह शरीर को स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन करने की शक्ति दे सके।

—आत्मकथा, अध्याय ६

हस्तक्षेप

किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि वह किसी दूसरे के जीवन-दर्शन में हस्तक्षेप करे या उसके विरुद्ध कोई बात कहे। लेकिन यह तभी सम्भव है जब उस जीवन-दर्शन का आधार सच्चाई और सदाशयता हो।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र

हिमालय

भारत में यदि कुछ अमूल्य और श्रेष्ठ है, कुछ गौरवपूर्ण है

तो उस सबकी स्मृतियां हिमालय के साथ सम्बद्ध हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६-१०-१९१५)

हृदय

हृदय सदा ही हृदय का स्पर्श करता है।

—भाई शरच्चन्द्र बोस को पत्र (कटक)

विविध

अगर किसीको विश्वास हो जाए कि किसी अन्य व्यक्ति की मानसिकता में परिवर्तन हो गया है तो उसे समझा-बुझाकर या जोर डालकर यह यकीन नहीं दिलाया जा सकता कि ऐसा नहीं हुआ है। ऐसी स्थिति में अगर कोई अपनी सफाई देने की जरूरत से ज्यादा कोशिश करता है तो दूसरे लोग उससे उल्टी बात पर विश्वास करने की ओर से भी दृढ़ प्रवृत्ति दिखाते हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१९१७)

अनेक विषयों में मनुष्य का जोर नहीं चलता परन्तु शरीर का ध्यान न रखना एक अपराध है। यह अपराध केवल अपने प्रति ही नहीं अपितु देश के प्रति भी है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२१-१-१९२०)

इस निर्णायक घड़ी में जबकि हमारी आंखों के सामने ही इतिहास का निर्माण हो रहा है, हम सबके लिए सर्वाधिक आवश्यकता इस बात की है कि हम केवल भारत के बारे में ही सोचें, दलीय या जातीय हितों के बारे में नहीं। किसी भी व्यक्ति या दल का कोई भी बलिदान यदि इससे भारत की मुक्ति का उद्देश्य पूरा होता हो, अधिक बड़ा नहीं कहा जा सकता।

—क्रास रोड्स, पृ० ३४३

कोई भी शक्ति निराशा में छिपी आशा को मिटा नहीं सकती···इसी से जीवन की मधुरता बनी रहती है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-९-१९१५)

जब अंग्रेजों ने मांडले को अधिकार में लिया तो उन्होंने एक आदेश निकाला कि कोई भी भारतीय अभिवादन के रूप में 'जयहिन्द' का प्रयोग नहीं करेगा, जिसका जैसा कि आप जानते हैं, अर्थ है 'भारत की विजय'। इस आदेश का परिणाम यह हुआ कि मांडले में बाल-सेना के बालक-बालिकाएं बाहर सड़कों पर आ गए और अंग्रेज अधिकारियों से उन्होंने 'जयहिन्द' कहकर अभिवादन किया। हमारा संकेत यह है कि यदि हम बहादुरी के साथ लड़ते हैं और अपना रक्त बहाते हैं, तो हम न केवल उन देशवासियों को प्रभावित करने में समर्थ होंगे जो उदासीन और उत्साहहीन, है बल्कि हम शत्रुओं को प्रभावित करने में भी समर्थ होंगे।

—सिंगापुर से प्रसारण (२४-७-१९४५)

जैसे साधन जुट पाएं उन्हें लेकर ही काम करना चाहिए। जिस प्रकार जीवन दिए बिना जीवन नहीं मिलता, ठीक उसी प्रकार दिए बिना प्रतिदान में प्रेम नहीं मिलता। उसी प्रकार स्वयं मनुष्य बने बिना दूसरों को मनुष्य भी नहीं बनाया जा सकता।

—श्री हरिचरण बागची को पत्र (१९२६)

जो चीज संसार की भलाई के लिए है हम उसके विरुद्ध नहीं जा सकते।

—माता प्रभावतीदेवी को पत्र (१९१२-१३)

निर्धनता और बेरोजगारी की, अशिक्षा और बीमारी की, कर-पद्धति और ऋणग्रस्तता की समस्याएं हिन्दुओं, मुसलमानों

और समाज के अन्य सभी वर्गों को समान रूप से प्रभावित करती हैं।

—क्रास रोड्स, पृ० ७४

प्रत्येक सम्प्रदाय तथा समवाय के इतिहास प्रायः समान होते हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-६-१६१५)

भारतीय जनता को विश्वास हो गया है कि वाद-विवाद, या तर्क, प्रचार और सत्याग्रह से स्वतंत्रता प्राप्त करने की आशा अब नहीं रही। बल्कि उसके लिए अधिक कारगर और शक्तिशाली तरीकों को अपनाना पड़ेगा।

—आजाद हिन्द रेडियो, जर्मनी से प्रसारण (२५-३-१६४२)

मुझे सर्वाधिक सुख उस समय अनुभव होता है जब मैं देखता हूं कि गोरा मेरी सेवा कर रहा है और मेरे जूते साफ कर रहा है।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१२-११-१६१६)

यदि प्रत्येक मनुष्य को सम्भव न हो तो कम से कम प्रत्येक परिवार को आज मातृभूमि के चरणों में अर्घ्य देना पड़ेगा।

श्री शरच्चन्द्र बोस के नाम पत्र (६-४-१६२१)

यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि हमारे आजीवन शत्रु से युद्ध करके और उन्हें भयंकर हार को चोट पहुंचाकर त्रिपक्षीय शक्तियां अप्रत्यक्ष रूप से हमारे राष्ट्रीय संग्राम की असाधारण रूप से सहायता कर रही हैं। यदि हमारे शत्रु पर इन शक्तियों द्वारा प्राणघातक चोट न की जाती तो मुक्ति प्राप्त करने का हमारा कार्य आज की अपेक्षा सौ गुना अधिक कठिन हो जाता। हम इसके लिए कृतज्ञ हैं, किन्तु हम उससे भी अधिक कृतज्ञ हैं कि त्रिपक्षीय शक्तियां न केवल हमें अप्रत्यक्ष सहायता दे रही हैं,

अपितु हमारे स्वतन्त्रता संघर्ष में सक्रिय सहयोग भी कर रही हैं।

मैं जानता हूं कि मेरे कतिपय देशवासी जो अंग्रेजी संस्थाओं में तैयार किए गए हैं और अंग्रेजी प्रचार से प्रभावित हुए हैं, त्रिपक्षीय शक्तियों की पात्रता में सन्देह करते हैं। मैं अपने उन देशवासियों को कहूंगा कि वे मुझ में विश्वास रखें। क्योंकि *शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार, जिसने मुझे जीवन-भर उत्पीड़ित* किया और ग्यारह बार जेल में डाला, मेरा हौसला नहीं तोड़ पाई। धरती पर कोई शक्ति ऐसा करने की आशा नहीं कर सकती, और यदि धूर्त, चालाक तथा साधन-सम्पन्न ब्रिटिश राजनीतिज्ञ मुझे फुसलाने और कलुषित करने में असफल हो गए तो और कोई ऐसा नहीं कर सकता।

—टोकियो से प्रसारण (२४-६-१६४३)

यौवन में जो भावनाएं सब विघ्न-बाधाओं को हटा कर व्यक्त होना चाहती है वही सब आयु बढ़ने पर रुक जाती हैं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (१६१७)

हमने प्रजातन्त्रात्मक युग में जन्म लिया है। प्रजातंत्रात्मक प्रभाव हमारे दिलों और दिमागों में है। यहां जोर-जबरदस्ती से कुछ भी कर पाना संभव नहीं।

—मित्र हेमन्तकुमार सरकार को पत्र (२६-६-१६१५)

हमारे दिमागों में तनिक-सा भी संदेह नहीं है कि जब हम अपनी सेना के साथ भारतीय सीमाओं को पार करेंगे और अपने राष्ट्रीय ध्वज को भारत की धरती पर फहराएंगे, देशभर में वास्तविक क्रान्ति फूट पड़ेगी—क्रांति जो अंततोगत्वा भारत से ब्रिटिश शासन को बाहर निकाल देगी।

—आई० एम० आई० की कमान सम्हालने पर (२६-८-१६४३)

●●●

मुद्रक : गोपल प्रिंटर्स, भोलानाथ नगर, शाहदरा, दिल्ली-३२